नमो नमो निम्मलदंसणस्स

बाल ब्रह्मचारी श्री नेमिनाथाय नम:

पूज्य आनन्द-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर-गुरूभ्यो नम:

आगम-७

उपासकदशा

आगमसूत्र हिन्दी अनुवाद

अनुवादक एवं सम्पादक

आगम दीवाकर मुनि दीपरत्नसागरजी

[M.Com. M.Ed. Ph.D. श्रुत महर्षि]

आगम हिन्दी-अनुवाद-श्रेणी पुष्प- ७

आगमसूत्र-७- 'उपासकदशा'

अंगसूत्र-७ -हिन्दी अनुवाद

कहां क्या देखे ?

क्रम	विषय	पृष्ठ	क्रम	विषय	पृष्ठ
०१	आनंद	०५	०६	कुंडकोलिक	२०
०२	कामदेव	१२	०७	सद्दालपुत्र	२२
०३	चुलनीपिता	१६	०८	महाशतक	२७
०४	सुरादेव	१८	०९	नंदिनीपिता	३०
०५	चुल्लशतक	१९	१०	लेइयापिता	३०

४५ आगम वर्गीकरण						
क्रम	आगम का नाम	सूत्र		क्रम	आगम का नाम	सूत्र
०१	आचार	अंगसूत्र-१		२५	आतुरप्रत्याख्यान	पयन्नासूत्र-२
०२	सूत्रकृत्	अंगसूत्र-२		२६	महाप्रत्याख्यान	पयन्नासूत्र-३
०३	स्थान	अंगसूत्र-३		२७	भक्तपरिज्ञा	पयन्नासूत्र-४
०४	समवाय	अंगसूत्र-४		२८	तंदुलवैचारिक	पयन्नासूत्र-५
०५	भगवती	अंगसूत्र-५		२९	संस्तारक	पयन्नासूत्र-६
०६	ज्ञाताधर्मकथा	अंगसूत्र-६		३०.१	गच्छाचार	पयन्नासूत्र-७
०७	उपासकदशा	अंगसूत्र-७		३०.२	चन्द्रवेध्यक	पयन्नासूत्र-७
०८	अंतकृत् दशा	अंगसूत्र-८		३१	गणिविद्या	पयन्नासूत्र-८
०९	अनुत्तरोपपातिकदशा	अंगसूत्र-९		३२	देवेन्द्रस्तव	पयन्नासूत्र-९
१०	प्रश्नव्याकरणदशा	अंगसूत्र-१०		३३	वीरस्तव	पयन्नासूत्र-१०
११	विपाकश्रुत	अंगसूत्र-११		३४	निशीथ	छेदसूत्र-१
१२	औपपातिक	उपांगसूत्र-१		३५	बृहत्कल्प	छेदसूत्र-२
१३	राजप्रश्निय	उपांगसूत्र-२		३६	व्यवहार	छेदसूत्र-३
१४	जीवाजीवाभिगम	उपांगसूत्र-३		३७	दशाश्रुतस्कन्ध	छेदसूत्र-४
१५	प्रज्ञापना	उपांगसूत्र-४		३८	जीतकल्प	छेदसूत्र-५
१६	सूर्यप्रज्ञप्ति	उपांगसूत्र-५		३९	महानिशीथ	छेदसूत्र-६
१७	चन्द्रप्रज्ञप्ति	उपांगसूत्र-६		४०	आवश्यक	मूलसूत्र-१
१८	जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति	उपांगसूत्र-७		४१.१	ओघनिर्युक्ति	मूलसूत्र-२
१९	निरयावलिका	उपांगसूत्र-८		४१.२	पिंडनिर्युक्ति	मूलसूत्र-२
२०	कल्पवतंसिका	उपांगसूत्र-९		४२	दशवैकालिक	मूलसूत्र-३
२१	पुष्पिका	उपांगसूत्र-१०		४३	उत्तराध्ययन	मूलसूत्र-४
२२	पुष्पचूलिका	उपांगसूत्र-११		४४	नन्दी	चूलिकासूत्र-१
२३	वृष्णिदशा	उपांगसूत्र-१२		४५	अनुयोगद्वार	चूलिकासूत्र-२
२४	चतु:शरण	पयन्नासूत्र-१		---	----------	-----

मुनि दीपरत्नसागरजी प्रकाशित साहित्य

आगम साहित्य			आगम साहित्य		
क्र	साहित्य नाम	बूक्स	क्रम	साहित्य नाम	बू
1	मूल आगम साहित्य:-	147	6	आगम अन्य साहित्य:-	10
	-1- आगमसुत्ताणि-मूलं print	[49]		-1- આગમ કથાનુયોગ	06
	-2- आगमसुत्ताणि-मूलं Net	[45]		-2- आगम संबंधी साहित्य	02
	-3- आगममञ्जूषा (मूल प्रत)	[53]		-3- ऋषिभाषित सूत्राणि	01
2	आगम अनुवाद साहित्य:-	165		-4- आगमिय सूक्तावली	01
	-1- આગમસૂત્ર ગુજરાતી અનુવાદ	[47]		आगम साहित्य- कुल पुस्तक	516
	-2- आगमसूत्र हिन्दी अनुवाद Net	[47]			
	-3- AagamSootra English Trans.	[11]			
	-4- આગમસૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	[48]			
	-5- आगमसूत्र हिन्दी अनुवाद print	[12]		अन्य साहित्य:-	
3	आगम विवेचन साहित्य:-	171	1	તત્વાભ્યાસ સાહિત્ય-	13
	-1- आगमसूत्र सटीकं	[46]	2	સૂત્રાભ્યાસ સાહિત્ય-	06
	-2- आगमसूत्राणि सटीकं प्रताकार-1	[51]	3	વ્યાકરણ સાહિત્ય-	05
	-3- आगमसूत्राणि सटीकं प्रताकार-2	[09]	4	વ્યાખ્યાન સાહિત્ય-	04
	-4- आगम चूर्णि साहित्य	[09]	5	જિનભક્તિ સાહિત્ય-	09
	-5- सवृत्तिक आगमसूत्राणि-1	[40]	6	વિધિ સાહિત્ય-	04
	-6- सवृत्तिक आगमसूत्राणि-2	[08]	7	આરાધના સાહિત્ય	03
	-7- सचूर्णिक आगमसुत्ताणि	[08]	8	પરિચય સાહિત્ય-	04
4	आगम कोष साहित्य:-	14	9	પૂજન સાહિત્ય-	02
	-1- आगम सद्दकोसो	[04]	10	તીર્થંકર સંક્ષિપ્ત દર્શન	25
	-2- आगम कहाकोसो	[01]	11	પ્રકીર્ણ સાહિત્ય-	05
	-3- आगम-सागर-कोष:	[05]	12	દીપરત્નસાગરના લઘુશોધનિબંધ	05
	-4- आगम-शब्दादि-संग्रह (प्रा-सं-गु)	[04]		આગમ સિવાયનું સાહિત્ય કૂલ પુસ્તક	85
5	आगम अनुक्रम साहित्य:-	09			
	-1- આગમ વિષયાનુક્રમ- (મૂળ)	02		1-आगम साहित्य (कुल पुस्तक)	51
	-2- आगम विषयानुक्रम (सटीकं)	04		2-आगमेतर साहित्य (कुल	08
	-3- आगम सूत्र-गाथा अनुक्रम	03		दीपरत्नसागरजी के कुल प्रकाशन	60

મુનિ દીપરત્નસાગરનું સાહિત્ય

1	મુનિ દીપરત્નસાગરનું આગમ સાહિત્ય	[કુલ પુસ્તક 516]	તેના કુલ પાના [98,300]
2	મુનિ દીપરત્નસાગરનું અન્ય સાહિત્ય	[કુલ પુસ્તક 85]	તેના કુલ પાના [09,270]
3	મુનિ દીપરત્નસાગર સંકલિત 'तत्त्वार्थसूत्र'ની વિશિષ્ટ DVD		તેના કુલ પાના [27,930]

અમારા પ્રકાશનો કુલ ૬૦૧ + વિશિષ્ટ DVD કુલ પાના 1,35,500

[७] उपासकदशा
अंगसूत्र-७- हिन्दी अनुवाद

अध्ययन-१ – आनंद

सूत्र - १

उस काल, उस समय में, चम्पा नामक नगरी थी, पूर्णभद्र चैत्य था । (वर्णन औपपातिक सूत्र समान) ।

सूत्र – २, ३

उस काल उस समय आर्यसुधर्मा समवसृत हुए । आर्य सुधर्मा के ज्येष्ठ अन्तेवासी आर्य जम्बू नामक अनगार ने–पूछा छठे अंग नायाधम्मकहाओ का जो अर्थ बतलाया, वह मैं सून चूका हूँ । भगवान ने सातवें अंग उपासकदशा का क्या अर्थ व्याख्यात किया ? जम्बू ! श्रमण भगवान महावीर ने सातवे अंग उपासकदशा के दस अध्ययन प्रज्ञप्त किये । ----- आनन्द, कामदेव, चुलनीपिता, सुरादेव, चुल्लशतक, कुंडकौलिक, सद्दालपुत्र, महाशतक, नन्दिनीपिता, शालिहीपिता ।

सूत्र - ४

भगवन् ! श्रमण भगवान महावीर ने सातवे अंग उपासकदशा के जो दस अध्ययन व्याख्यात किए, उनमें उन्होंने पहले अध्ययन का क्या अर्थ–कहा ?

सूत्र - ५

जम्बू ! उस काल, उस समय, वाणिज्यग्राम नगर था । उस के बाहर–ईशान कोण में दूतीपलाश चैत्य था । जितशत्रु वहाँ का राजा था । वहाँ वाणिज्यग्राम में आनन्द नामक गाथापति था जो धनाढ्य यावत् अपरिभूत था । आनन्द गाथापति का चार करोड़ स्वर्ण खजाने में, चार करोड़ स्वर्ण व्यापार में, चार करोड़ स्वर्ण-धन, धान्य आदि में लगा था । उसके चार व्रज–गोकुल थे । प्रत्येक गोकुल में दस हजार गायें थीं । आनन्द गाथापति बहुत से राजा–यावत् सार्थवाह–के अनेक कार्यों में, कारणों में, मंत्रणाओं में, पारिवारिक समस्याओं में, गोपनीय बातों में, एकान्त में विचारणीय–व्यवहारों में पूछने योग्य एवं सलाह लेने योग्य व्यक्ति था । वह परिवार का मेढ़ि–यावत् सर्व-कार्य-वर्धापक था ।

आनन्द गाथापति की शिवनन्दा नामक पत्नी थी, वह परिपूर्ण अंग वाली यावत् सर्वांगसुन्दरी थी । आनन्द गाथापति की वह इष्ट–एवं अनुरक्त थी । पति के प्रतिकूल होने पर भी वह कभी रुष्ट नहीं होती थी । वह अपने पति के साथ इष्ट-प्रिय सांसारिक कामभोग भोगती हुई रहती थी । वाणिज्य ग्राम नगर के बाहर कोल्लाक नामक सन्निवेश था–वह सन्निवेश समृद्धिवान्, निरुपद्रव, दर्शनीय, सुंदर यावत् मनका प्रसन्नता देने वाला था । वहाँ कोल्लाक सन्निवेश में आनन्द गाथापति के अनेक मित्र, ज्ञातिजन–स्वजातीय लोग, निजक, स्वजन, सम्बन्धी, परिजन–आदि निवास करते थे, जो समृद्ध एवं सुखी थे ।

उस काल और समय में श्रमण भगवंत महावीर पधारे । पर्षदा नीकली । वंदन करके वापस लौटी । कोणिक राजा कि तरह जितशत्रु राजा भी नीकला । वंदन यावत् पर्युपासना की । तत्पश्चात् आनंद गृहपति ने भगवंत महावीर के आने की बात सूनी । अरिहंत भगवंतों का नाम श्रवण भी दुर्लभ है फिर वंदन नमस्कार का तो कहना ही क्या ? इसीलिए मैं वहाँ जाऊं यावत् भगवंत की पर्युपासना करुं । ऐसा सोचकर शुद्ध एवं सभा में पहनने लायक वस्त्र धारण करके, अल्प एवं महामूल्यवान अलंकार धारण करके आनन्द गृहपति अपने घरसे नीकला । कोरंट पुष्पों की माला से युक्त छत्र धारण किया हुआ और जनसमूह से परिवृत्त होकर चलता चलता वह वाणिज्य ग्रामनगर के बीचोंबीच से नीकलकर जहाँ दूतिपलाश चैत्य था । जहाँ भगवान महावीर थे वहाँ आकर, भगवंत की तीन बार प्रदक्षिणा करके वन्दन-नमस्कार यावत् पर्युपासना करता है ।

सूत्र - ६

तत्पश्चात् श्रमण भगवान महावीर ने आनन्द गाथापति तथा महती परीषद् को धर्मोपदेश किया । पर्षदा वापस लौटी और राजा भी नीकला ।

सूत्र - ७

तब आनन्द गाथापति श्रमण भगवान महावीर से धर्म का श्रवण कर हर्षित व परितुष्ट होता हुआ यों बोला–भगवन् ! मुझे निर्ग्रन्थ प्रवचन में श्रद्धा है, विश्वास है । निर्ग्रन्थ-प्रवचन मुझे रुचिकर है । वह ऐसा ही है, तथ्य है, सत्य है, इच्छित है, प्रतीच्छित है, इच्छित-प्रतिच्छित है । यह वैसा ही है, जैसा आपने कहा । देवानुप्रिय ! जिस प्रकार आपके पास अनेक राजा, ऐश्वर्यशाली, तलवर, माडंबिक, कौटुम्बिक, श्रेष्ठी, सेनापति एवं सार्थवाह आदि मुण्डित होकर, गृह-वास का परित्याग कर अनगार के रूप में प्रव्रजित हुए, मैं उस प्रकार मुण्डित होकर प्रव्रजित होने में असमर्थ हूँ, इसलिए आपके पास पाँच अणुव्रत, सात शिक्षाव्रत मूलक बारह प्रकार का गृहधर्म–ग्रहण करना चाहता हूँ । भगवान ने कहा–देवानुप्रिय ! जिससे तुमको सुख हो, वैसा ही करो, पर विलम्ब मत करो ।

सूत्र - ८

तब आनन्द गाथापति ने श्रमण भगवान महावीर के पास प्रथम स्थूल प्राणातिपात–परित्याग किया । मैं जीवन पर्यन्त दो करण–करना, कराना तथा तीन योग-मन, वचन एवं काया से स्थूल हिंसा का परित्याग करता हूँ, तदनन्तर उसने स्थूल मृषावाद–का परित्याग किया, मैं जीवन भर के लिए दो कारण और तीन योग से स्थूल मृषावाद का परित्याग किया, मैं जीवनभर के लिए दो कारण और तीन योग से स्थूल मृषावाद का परित्याग करता हूँ । उसके बाद उसने स्थूल अदत्तादान का परित्याग किया । मैं जीवनभर के लिए दो करण और तीन योग से स्थूल चोरी का परित्याग करता हूँ । फिर उसने स्वदारसंतोष व्रत के अन्तर्गत मैथुन का परिमाण किया । अपनी एकमात्र पत्नी शिवनंदा के अतिरिक्त अवशेष समग्र मैथुनविधि का परित्याग करता हूँ ।

तब उसने–परिग्रह का परिमाण करते हुए–निधान चार करोड़ स्वर्ण-मुद्राओं, व्यापार-प्रयुक्त चार करोड़ स्वर्ण-मुद्राओं तथा घर व घर के उपकरणों में प्रयुक्त चार करोड़ स्वर्ण-मुद्राओं के अतिरिक्त मैं समस्त स्वर्ण-मुद्राओं का परित्याग करता हूँ । फिर उसने चतुष्पद-विधि परिमाण किया । दस-दस हजार के चार गोकुलों के अतिरिक्त मैं बाकी सभी चौपाए पशुओं के परिग्रह का परित्याग करता हूँ । फिर उसने क्षेत्र–वास्तु-विधि का परिमाण किया–सौ निवर्तन के एक हल के हिसाब से पाँच सौ हलों के अतिरिक्त मैं समस्त क्षेत्र–का परित्याग करता हूँ । तत्पश्चात् उसने शकटविधि का परिमाण किया । पाँच सौ गाड़ियाँ बाहर यात्रा में तथा पाँच सौ गाड़ियाँ माल ढ़ोने आदि में प्रयुक्त–के सिवाय मैं सब गाड़ियों के परिग्रह का परित्याग करता हूँ । फिर उसने वाहनविधि–का परिमाण किया । पाँच सौ वाहन दिग्-यात्रिक तथा पाँच सौ गृह-उपकरण के सन्दर्भ में प्रयुक्त–के सिवाय मैं सब प्रकार के वाहन रूप परिग्रह का परित्याग करता हूँ ।

फिर उसने उपभोग-परिभोग-विधि का प्रत्याख्यान करते हुए भीगे हुए शरीर को पोंछने के तौलिए आदि परिमाण किया । मैं सुगन्धित और लाल–एक प्रकार के अंगोछे के अतिरिक्त सभी अंगोछे रूप परिग्रह का परित्याग करता हूँ । तत्पश्चात् उसने दतौन के संबंध में परिमाण किया – हरि मुलहठी के अतिरिक्त मैं सब प्रकार के दतौनों का परित्याग करता हूँ । तदनन्तर उसने फलविधि का परिमाण किया – मैं क्षीर आमलक–के सिवाय शेष फल-विधि का परित्याग करता हूँ । उसके बाद उसने अभ्यंगन-विधि का परिमाण किया – शतपाक तथा सहस्रपाक तैलों के अतिरिक्त और सभी मालिश के तैलों का परित्याग करता हूँ । इसके बाद उसने उबटन-विधि का परित्याग किया । एक मात्र सुगन्धित गंधाटक–अतिरिक्त अन्य सभी उबटनों का मैं परित्याग करता हूँ ।

उसके बाद उसने स्नान-विधि का परिमाण किया । पानी के आठ औष्ट्रिक–(घड़े) के अतिरिक्त स्नानार्थ जल का परित्याग करता हूँ । उसने वस्त्रविधि का परिमाण किया–सूती दो वस्त्रों के सिवाय मैं अन्य वस्त्रों का परित्याग करता हूँ । उसने विलेपन विधि का परिमाण किया–अगर, कुंकुम तथा चन्दन के अतिरिक्त मैं सभी विलेपन-द्रव्यों

का परित्याग करता हूँ । इसके पश्चात् उसने पुष्प-विधि का परिमाण किया–मैं श्वेत कमल तथा मालती के फूलों की माला के सिवाय सभी फूलों का परित्याग करता हूँ । तब उसने आभरण-विधि का परिमाण किया–मैं शुद्ध सोने सादे कुंडल और नामांकित मुद्रिका के सिवाय सब प्रकार के गहनों का परित्याग करता हूँ । तदनन्तर उसने धूपनविधि का परिमाण किया । अगर, लोबान तथा धूप के सिवाय मैं सभी धूपनीय वस्तुओं का परित्याग करता हूँ

उसने भोजन-विधि का परिमाण किया । मैं एकमात्र काष्ठ पेय अतिरिक्त सभी पेय पदार्थों का परित्याग करता हूँ । उसने भक्ष्य-विधि का परिमाण किया । मैं–घेवर और खाजे के सिवाय और सभी पकवानों का परित्याग करता हूँ । उसने ओदनविधि का परिमाण किया–कलम जाति के धान चावलों के सिवाय मैं और सभी प्रकार के चावलों का परित्याग करता हूँ । उसने सूपविधि का परिमाण किया । मटर, मूँग और उरद की दाल के सिवाय मैं सभी दालों का परित्याग करता हूँ । घृतविधि का परिमाण किया । शरद ऋतु के उत्तम गो-घृत के सिवाय में सभी प्रकार के घृत का परित्याग करता हूँ ।

उसने शाकविधि का परिमाण किया । बथुआ, लौकी, सुआपालक तथा भिंड़ी–इन सागों के सिवाय और सब प्रकार के सागों का परित्याग करता हूँ । माधुरकविधि का परिमाण किया । मैं पालंग माधुरक के गोंद से बनाए मधुर पेय के सिवाय अन्य सभी पेयों का परित्याग करता हूँ । व्यंजनविधि का परिमाण किया । मैं कांजी बड़े तथा खटाई बड़े मूँग आदि की दाल के पकौड़ों के सिवाय सब प्रकार के पदार्थों का परित्याग करता हूँ । पीने के पानी का परिमाण किया । मैं एकमात्र आकाश से गिरे–पानी के सिवाय अन्य सब प्रकार के पानी का परित्याग करता हूँ। मुखवासविधि का परिमाण किया । पाँच सुगन्धित वस्तुओ से युक्त पान के सिवाय मैं सभी पदार्थों का परित्याग करता हूँ ।तत्पश्चात् उसने चार प्रकार के अनर्थदण्ड–अपध्यानाचरित, प्रमादाचरित, हिंस्र-प्रदान तथा पापकर्मोपदेश का प्रत्याख्यान किया ।

सूत्र - ९

भगवान महावीर ने श्रमणोपासक आनन्द से कहा–आनन्द ! जिसने जीव, अजीव आदि पदार्थों के स्वरूप को यथावत् रूप में जाना है, उसको सम्यक्त्व के पाँच प्रधान अतिचार जानने चाहिए और उनका आचरण नहीं करना चाहिए । यथा–शंका, कांक्षा, विचिकित्सा, पर-पाषंड-प्रशंसा तथा पर-पाषंड-संस्तव ।

इसके बाद श्रमणोपासक को स्थूल-प्राणातिपातविरमण व्रत के पाँच अतिचारों को जानना चाहिए, उनका आचरण नहीं करना चाहिए । बन्ध, वध, छविच्छेद, अतिभार, भक्त-पान-व्यवच्छेद । तत्पश्चात् स्थूल मृषावाद-विरमण व्रत के पाँच अतिचारों को जानना चाहिए, उनका आचरण नहीं करना चाहिए । सहसा-अभ्याख्यान, रहस्य - अभ्याख्यान, स्वादरमंत्रभेद, मृषोपदेश, कूटलेखकरण । तदनन्तर स्थूल अदत्तादानविरमण-व्रत के पाँच अतिचारों को जानना चाहिए, उनका आचरण नहीं करना चाहिए । स्नेहाहृत, तस्करप्रयोग, विरुद्धराज्यातिक्रम, कूटतुला-कूटमान, तत्प्रतिरूपकव्यवहार । तदनन्तर स्वदारसंतोष-व्रत के पाँच अतिचारों को जानना चाहिए, उनका आचरण नहीं करना चाहिए । इत्वरिकपरिगृहीतागमन, अपरिगृहीतागमन, अनंगक्रीड़ा, पर-विवाहकरण तथा कामभोग-तीव्राभिलाष । श्रमणोपासक को ईच्छा-परिमाण-व्रत के पाँच अतिचारों को जानना चाहिए, उनका आचरण नहीं करना चाहिए । क्षेत्रवास्तु-प्रमाणतिक्रम, हिरण्यस्वर्ण-प्रमाणातिक्रम, द्विपदचतुष्पद-प्रमाणातिक्रम, धनधान्य-प्रमाणातिक्रम, कुप्य-प्रमाणातिक्रम ।

तदनन्तर दिग्व्रत के पाँच अतिचारों को जानना चाहिए । उनका आचरण नहीं करना चाहिए । ऊर्ध्व-दिक्-प्रमाणातिक्रम, अधोदिक-प्रमाणातिक्रम, तिर्यक्-दिक-प्रमाणातिक्रम, क्षेत्र-वृद्धि, स्मृत्यन्तर्धान । उपभोग-परिभोग दो प्रकार का कहा गया है–भोजन की अपेक्षा से तथा कर्म की अपेक्षा से । भोजन की अपेक्षा से श्रमणोपासक को उपभोग-परिभोग व्रत के पाँच अतिचारों को जानना चाहिए, उनका आचरण नहीं करना चाहिए । सचित्त आहार, सचित्त प्रतिबद्ध आहार, अपक्व औषधि-भक्षणता, दुष्पक्व औषधि-भक्षणता तथा तुच्छ औषधि-भक्षणता । कर्म की अपेक्षा से श्रमणोपासक को पन्द्रह कर्मादानों को जानना चाहिए, उनका आचरण नहीं करना चाहिए । वे

अंगारकर्म, वनकर्म, शकटकर्म, भाटीकर्म, स्फोटनकर्म, दन्तवाणिज्य, लाक्षावाणिज्य, रसवाणिज्य, रसवाणिज्य, विषवाणिज्य, केशवाणिज्य, यन्त्रपीडनकर्म, निर्लांछन-कर्म, दवाग्निदापन, सर-ह्रद-तडागशोषण तथा असती-जन-पोषण । उसके बाद श्रमणोपासक को अनर्थ-दंड-विरमण व्रत के पाँच अतिचारों को जानना चाहिए, उनका आचरण नहीं करना चाहिए । कन्दर्प, कौत्कुच्य, मौखर्य, संयुक्ताधिकरण तथा उपभोग परिभोगातिरेक ।

तत्पश्चात् श्रमणोपासक को सामायिक व्रत के पाँच अतिचारों को जानना चाहिए, उनका आचरण नहीं करना चाहिए । मन-दुष्प्रणिधान, वचन-दुष्प्रणिधान, काय-दुष्प्रणिधान, सामायिक-स्मृति-अकरणता, सामायिक-अनवस्थित-करणता । तदनन्तर श्रमणोपासक को देशावकाशिक व्रत के पाँच अतिचारों को जानना चाहिए, उनका आचरण नहीं करना । आनयन-प्रयोग, प्रेष्य-प्रयोग, शब्दानुपात, रूपानुपात तथा बहिःपुद्गल-प्रक्षेप । तदनन्तर श्रमणोपासक को पोषधोपवास व्रत के पाँच अतिचारों को जानना चाहिए, उनका आचरण नहीं करना चाहिए । अप्रतिलेखितदुष्प्रतिलेखित-शय्या-संस्तारक, अप्रमार्जितदुष्प्रमार्जित-शय्यासंस्तारक, अप्रतिलेखितदुष्प्रतिलेखित उच्चारप्रस्रवण-भूमि, अप्रमार्जितदुष्प्रमार्जित-उच्चारप्रस्रवणभूमि तथा पोषधोपवास-सम्यक्-अननुपालन । तत्पश्चात् श्रमणोपासक को यथा-संविभाग व्रत के पाँच अतिचारों को जानना चाहिए, उनका आचरण नहीं करना चाहिए । सचित्तनिक्षेपणता, सचित्तपिधान, कालातिक्रम, परव्यपदेश तथा मत्सरिता । तदनन्तर अपश्चिम-मरणांतिक-संलेषणा-जोषणाआराधना के पाँच अतिचारों को जानना चाहिए, उनका आचरण नहीं करना चाहिए। इहलोक-आशंसाप्रयोग, परलोक-आशंसाप्रयोग, जीवित-आशंसाप्र०, मरण-आशंसाप्र०,काम-भोग-आशंसाप्र०

सूत्र - १०

फिर आनन्द गाथापति ने श्रमण भगवान महावीर के पास पाँच अणुव्रत तथा सात शिक्षाव्रतरूप बारह प्रकार का श्रावक-धर्म स्वीकार किया । भगवान महावीर को वन्दना-नमस्कार कर वह भगवान से यों बोला-भगवन् आज से अन्य यूथिक-उनके देव, उन द्वारा परिगृहीत-चैत्य-उन्हें वन्दना करना, नमस्कार करना, उनके पहले बोले बिना उनसे आलाप-संलाप करना, उन्हें अशन-पान-खादिम-स्वादिम-प्रदान करना, अनुप्रदान करना मेरे लिए कल्पनीय-नहीं है । राजा, गण-बल-देव व माता-पिता आदि गुरुजन का आदेश या आग्रह तथा अपनी आजीविका के संकटग्रस्त होने की स्थिति-मेरे लिए इसमें अपवाद है ।

श्रमणों, निर्ग्रन्थों को प्रासुक-अचित्त, एषणीय-अशन, पान, खाद्य तथा स्वाद्य आहार, वस्त्र, पात्र, कम्बल, पाद-प्रोञ्छन-पाट, बाजोट, ठहरने का स्थान, संस्तारक, भेषज-दवा देना मुझे कल्पता है । आनन्द ने यों अभिग्रह - किया । वैसा कर भगवान से प्रश्न पूछे । प्रश्न पूछकर उनका अर्थ-प्राप्त किया । श्रमण भगवान महावीर को तीन बार वंदना की । भगवान के पास से दूतीपलाश नामक चैत्य से रवाना हुआ । जहाँ वाणिज्यग्राम नगर था, जहाँ अपना घर था, वहाँ आया । अपनी पत्नी शिवनन्दा को बोला-देवानुप्रिये ! मैंने श्रमण भगवान के पास से धर्म सूना है । वह धर्म मेरे लिए इष्ट, अत्यन्त इष्ट और रुचिकर है । देवानुप्रिये ! तुम भगवान महावीर के पास जाओ, उन्हें वन्दना करो, पर्युपासना करो, पाँच अणुव्रत और सात शिक्षाव्रत-रूप बारह प्रकार का गृहस्थ-धर्म स्वीकार करो ।

सूत्र - ११

श्रमणोपासक आनन्द ने जब अपनी पत्नी शिवानन्दा से ऐसा कहा तो उसने हृष्ट-तुष्ट-अत्यन्त प्रसन्न होते हुए हाथ जोड़े, 'स्वामी ऐसा है ।' तब श्रमणोपासक आनन्द ने अपने सेवकों को बुलाया और कहा-तेज चलने वाले, यावत् श्रेष्ठ रथ शीघ्र ही उपस्थित करो, उपस्थित करके मेरी यह आज्ञा वापिस करो । तब शिवनन्दा वह धार्मिक उत्तम रथ पर सवार हुई । भगवान महावीर विराजित थे वहाँ जाकर तीन बार आदक्षिण-प्रदक्षिणा की, यावत् पर्युपासना करने लगी । श्रमण भगवान महावीर ने शिवनन्दा को तथा उस उपस्थित परीषद् को धर्म-देशना दी । तब शिवनन्दा श्रमण भगवान महावीर से धर्म सूनकर तथा उस हृदयमें धारण करके अत्यन्त प्रसन्न हुई । गृही-धर्म-स्वीकार किया, उसी धार्मिक उत्तम रथ पर सवार होकर जिस दिशा से आई थी, उसी दिशा की ओर चली गई

सूत्र - १२

गौतम ने भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार किया और पूछा-भन्ते ! क्या श्रमणोपासक आनन्द देवानुप्रिय के-आपके पास मुण्डित एवं परिव्रजित होने में समर्थ है ? गौतम ! ऐसा संभव नहीं है । श्रमणोपासक आनन्द बहुत वर्षों तक श्रमणोपासक-पर्याय-का पालन करेगा वह सौधर्म-कल्प-में-सौधर्मनामक देवलोक में अरुणाभ नामक विमान में देव के रूप में उत्पन्न होगा । वहाँ अनेक देवों की आयु-स्थिति चार पल्योपम की होती है। श्रमणोपासक आनन्द की भी आयु-स्थिति चार पल्योपम की होगी । तदनन्तर श्रमण भगवान महावीर वाणिज्यग्राम नगर के दूतीपलाश चैत्य से प्रस्थान कर एक दिन किसी समय अन्य जनपदों में विहार कर गए ।

सूत्र - १३

तब आनन्द श्रमणोपासक हो गया । जीव-अजीव का ज्ञाता हो गया यावत् श्रमणनिर्ग्रन्थों का अशन आदि से सत्कार करता हुआ विचरण करने लगा । उसकी भार्या शिवानंदा भी श्रमणोपासिका होकर श्रमणनिर्ग्रन्थों का सत्कार करती हुई विचरण करने लगी ।

सूत्र - १४

तदनन्तर श्रमणोपासक आनन्द को अनेकविध शीलव्रत, गुणव्रत, विरमणव्रत, प्रत्याख्यान-पोषधोपवास आदि द्वारा आत्म-भावित होते हुए-चौदह वर्ष व्यतीत हो गए । जब पन्द्रहवां वर्ष आधा व्यतीत हो चूका था, एक दिन आधी रात के बाद धर्म-जागरण करते हुए आनन्द के मन में ऐसा अन्तर्भाव-चिन्तन, आन्तरिक मांग, मनोभाव या संकल्प उत्पन्न हुआ-वाणिज्यग्राम नगर में बहुत से मांडलिक नरपति, ऐश्वर्यशाली एवं प्रभावशील पुरुष आदि के अनेक कार्यों में मैं पूछने योग्य एवं सलाह लेने योग्य हूँ, अपने सारे कुटुम्ब का मैं आधार हूँ । इस व्याक्षेप-के कारण मैं श्रमण भगवान महावीर के पास अंगीकृत धर्म-प्रज्ञप्ति-के अनुरूप आचार का सम्यक् परिपालन नहीं कर पा रहा हूँ । इसलिए मेरे लिए यही श्रेयस्कर है, मैं कल प्रभात हो जाने पर, मैं पूरण की तरह यावत् कुटुम्बीजनों को निमंत्रणा करके यावत् अपने ज्येष्ठ पुत्र को अपने स्थान पर नियुक्त करूँगा-अपने मित्र-गण तथा ज्येष्ठ पुत्र को पूछ कर कोल्लाक-सन्निवेश में स्थित ज्ञातकुल की पोषध-शाला का प्रतिलेखन कर भगवान महावीर के पास अंगीकृत धर्म-प्रज्ञप्ति के अनुरूप आचार का परिपालन करूँगा । यों आनन्द ने संप्रेक्षण-किया । वैसा कर, दूसरे दिन अपने मित्रों, जातीय जनों आदि को भोजन कराया । तत्पश्चात् उनका प्रचुर पुष्प, वस्त्र, सुगन्धित पदार्थ, माला एवं आभूषणों से सत्कार किया, सम्मान किया । उनके समक्ष अपने ज्येष्ठ पुत्र को बुलाया । बुलाकर, जैसा सोचा था, यह सब उसे कहा-पुत्र ! वाणिज्यग्राम नगर में मैं बहुत से मांडलिक राजा, ऐश्वर्यशाली पुरुषों आदि से सम्बद्ध हूँ, यावत् मैं समुचित धर्मोपासना कर नहीं पाता । अतः मेरे लिए यही श्रेयस्कर है कि तुमको अपने कुटुम्ब के मेढ़ि, प्रमाण, आधार एवं आलम्बन के रूप में स्थापित कर मैं यावत् समुचित धर्मोपासना में लग जाऊं । तब श्रमणोपासक आनन्द के ज्येष्ठ पुत्र ने 'जैसी आपकी आज्ञा' यों कहते हुए अत्यन्त विनयपूर्वक अपने पिता का कथन स्वीकार किया । श्रमणोपासक आनन्द ने अपने मित्र-वर्ग, जातीय जन आदि के समक्ष अपने ज्येष्ठ पुत्र को कुटुम्ब में अपने स्थान पर स्थापित किया । वैसा कर उपस्थित जनों से उसने कहा-महानुभावो ! आज से आप में से कोई भी मुझे विविध कार्यों के सम्बन्ध में न कुछ पूछे और न परामर्श ही करे, मेरे हेतु अशन, पान, खाद्य, स्वाद्य आदि आहार तैयार न करे और न मेरे पास लाए । फिर आनन्द ने अपने ज्येष्ठ पुत्र, मित्र-वृन्द जातीय जन आदि की अनुमति ली । अपने घर से प्रस्थान किया । वाणिज्यग्राम नगर से, जहाँ कोल्लाक सन्निवेश था, ज्ञातकुल एवं ज्ञातकुल की पौषधशाला थी, वहाँ पहुँचा । पोषध-शाला का प्रमार्जन किया-शौच एवं लघुशंका के स्थान की प्रतिलेखना की । वैसा कर दर्भ-का संस्तारक-लगाया, उस पर स्थित होकर पोषधशाला में पोषध स्वीकार कर श्रमण भगवान महावीर के पास स्वीकृत धर्म-प्रज्ञप्ति-के अनुरूप साधना-निरत हो गया ।

सूत्र - १५

तदनन्तर श्रमणोपासक आनन्द ने उपासक-प्रतिमाएं स्वीकार की । पहली उपासक-प्रतिमा उसने यथाश्रुत

-यथाकल्प-यथामार्ग, यथातत्त्व-सहज रूप में ग्रहण की, उसका पालन किया, उसे शोधित किया तीर्ण किया-कीर्तित किया-आराधित किया ।

सूत्र - १६

श्रमणोपासक आनन्द ने तत्पश्चात् दूसरी, तीसरी, चौथी, पाँचवी, छठी, सातवी, आठवी, नौवी, दसवी तथा ग्यारहवीं प्रतिमा की आराधना की । इस प्रकार श्रावक-प्रतिमा आदि के रूप में स्वीकृत उत्कृष्ट, विपुल प्रयत्न तथा तपश्चरण से श्रमणोपासक आनन्द का शरीर सूख गया, शरीर की यावत् उसके नाड़ियाँ दीखने लगीं ।

एक दिन आधी रात के बाद धर्मजागरण करते हुए आनन्द के मन में ऐसा अन्तर्भाव या संकल्प उत्पन्न हुआ-शरीर में इतनी कृशता आ गई है कि नाड़ियाँ दीखने लगी हैं । मुझ में उत्थान-बल-वीर्य-पुरुषकार पराक्रम-श्रद्धा-धृति-संवेग है । जब तक मेरे धर्माचार्य, धर्मोपदेशक, जिन-श्रमण भगवान महावीर विचरण कर रहे हैं, तब तक मेरे लिए यह श्रेयस्कर है कि मैं कल सूर्योदय होने पर अन्तिम मरणान्तिक संलेखना स्वीकार कर लूँ, खान-पान का प्रत्याख्यान-कर दूँ, मरण की कामना न करता हुआ, आराधनारत हो जाऊं । आनन्द ने यों चिन्तन किया। दूसरे दिन सवेरे अन्तिम मरणान्तिक संलेखना स्वीकार की, खान-पान परित्याग किया, मृत्यु की कामना न करता हुआ वह आराधना में लीन हो गया । तत्पश्चात् श्रमणोपासक आनन्द को एक दिन शुभ अध्यवसाय-शुभ परिणाम-विशुद्ध होती हुई लेश्याओं-के कारण, अवधि-ज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम से अवधि-ज्ञान उत्पन्न हो गया । फलतः वह पूर्व, पश्चिम तथा दक्षिण दिशा में पाँच-सौ, पाँच-सौ योजन तक का लवणसमुद्र का क्षेत्र, उत्तर दिशा में हिमवान्-वर्षधर पर्वत तक का क्षेत्र, ऊर्ध्व दिशा में सौधर्म कल्प-तक तथा अधोदिशा में प्रथम नारक-भूमि रत्नप्रभा में चौरासी हजार वर्ष की स्थिति युक्त, लोलुपाच्युत नामक नरक तक जानने लगा, देखने लगा ।

सूत्र - १७

उस काल वर्तमान-अवसर्पिणी के चौथे आरे के अन्त में, उस समय भगवान महावीर समवसृत हुए । परिषद् जुड़ी, धर्म सूनकर वापिस लौट गई । उस काल, उस समय श्रमण भगवान महावीर के ज्येष्ठ अन्तेवासी गौतम गोत्रीय इन्द्रभूति नामक अनगार, जिनकी देह की ऊंचाई सात हाथ थी, जो समचतुरस्र-संस्थान-संस्थित थे-कसौटी पर खचित स्वर्ण-रेखा की आभा लिए हुए कमल के समान जो गौर वर्ण थे, जो उग्र तपस्वी थे, दीप्त तपस्वी-तप्ततपस्वी-जो उराल-घोरगुण-घोर तपस्वी-घोर ब्रह्मचर्यवासी-उत्क्षिप्तशरीर-जो विशाल तेजोलेश्या अपने शरीर के भीतर समेटे हुए थे, बेले-बेले निरन्तर तप का अनुष्ठान करते हुए, संयमाराधना तथा तपश्चरणों द्वारा अपनी आत्मा को भावित-करते हुए विहार करते थे ।

बेले के पारणे के दिन भगवान गौतम ने पहले प्रहर में स्वाध्याय किया, दूसरे प्रहर में ध्यान, तीसरे प्रहर में अत्वरित-अचल-असंभ्रान्त-मुखवस्त्रिका का प्रतिलेखन किया, पात्रों और वस्त्रों का प्रतिलेखन एवं प्रमार्जन किया पात्र उठाये, जहाँ श्रमण भगवान महावीर थे, वहाँ आए । उन्हें वन्दन, नमस्कार किया । बोले-भगवन् ! आपसे अनुज्ञा प्राप्त कर मैं आज बेले के पारणे के दिन वाणिज्यग्राम नगरमें उच्च निम्न मध्यम-सभी कुलोंमें गृह-समुदानी-भिक्षा-चर्या के लिए जाना चाहता हूँ । भगवान बोले-देवानुप्रिय ! जैसे तुम्हें सुख हो, बिना प्रतिबन्ध-विलम्ब किए, करो । श्रमण भगवान महावीर की आज्ञा प्राप्त कर भगवान गौतम ने दूतीपलाश चैत्य से प्रस्थान किया । बिना शीघ्रता किए, स्थिरतापूर्वक अनाकुल भाव से युग-परिमाण-मार्ग का परिलोकन करते हुए, ईर्यासमितिपूर्वक-चलते हुए, वाणिज्यग्राम नगर आए । आकर वहाँ उच्च, निम्न एवं मध्यम कुलों में समुदानी-भिक्षा -हेतु घूमने लगे । भगवान गौतम ने व्याख्याप्रज्ञप्ति सूत्र में वर्णित भिक्षाचर्या के विधान के अनुरूप घूमते हुए यथापर्याप्त-उतना आहार-पानी भली-भाँति ग्रहण कर वाणिज्यग्राम नगर में चले । चलकर जब कोल्लाक सन्निवेश के न अधिक दूर, न अधिक निकट से नीकल रहे थे, तो बहुत से लोगों को बात करते सूना । देवानुप्रियो ! श्रमण भगवान महावीर के अन्तेवासी-श्रमणोपासक आनन्द पोषधशाला मे मृत्यु की आकांक्षा न करते हुए अन्तिम संलेखना, स्वीकार किए आराधना-रत हैं । अनेक लोगों से यह बात सूनकर, गौतम के मन में ऐसा भाव, चिन्तन, विचार या संकल्प उठा-मैं

श्रमणोपासक आनन्द के पास जाऊं और उसे देखूँ । ऐसा सोचकर वे जहाँ कोल्लाक सन्निवेश था, श्रमणोपासक आनन्त था, पोषधशाला थी, वहाँ गए ।

सूत्र - १८

श्रमणोपासक आनन्त ने भगवान् गौतम को आते हुए देखा । देखकर वह (यावत्) अत्यन्त प्रसन्न हुआ, भगवान गौतम को वन्दन-नमस्कार कर बोला–भगवन् ! मैं घोर तपश्चर्या से इतना क्षीण हो गया हूँ कि नाड़ियाँ दीखने लगी हैं । इसलिए देवानुप्रिय के–आपके पास आने तथा चरणों में वन्दना करने में असमर्थ हूँ । अत एव प्रभो ! आप ही स्वेच्छापूर्वक, अनभियोग से–यहाँ पधारें, जिससे मैं वन्दन, नमस्कार कर सकूँ । तब भगवान् गौतम, जहाँ आनन्द श्रमणोपासक था, वहाँ गए । श्रमणोपासक आनन्द ने तीन बार मस्तक झुकाकर भगवान गौतम के चरणों में वन्दन, नमस्कार किया । वन्दन, नमस्कार कर वह यों बोला–भगवन् ! क्या घर में रहते हुए एक गृहस्थ को अवधि-ज्ञान उत्पन्न हो सकता है ? गौतम ने कहा–हो सकता है ।

आनन्द बोला–भगवन् ! एक गृहस्थ की भूमिका में विद्यमान मुझे भी अवधिज्ञान हुआ है, जिससे मैं पूर्व, पश्चिम तथा दक्षिण दिशा में पाँच-सौ, पाँच-सौ योजन तक का लवणसमुद्र का क्षेत्र, उत्तर दिशा में हिमवान्–वर्षधर पर्वत तक का क्षेत्र, ऊर्ध्व दिशा में सौधर्म कल्प–तक तथा अधोदिशा में प्रथम नारक-भूमि रत्न-प्रभा में लोलुपा-च्युत नामक नरक तक जानता हूँ, देखता हूँ । तब भगवान गौतम ने श्रमणोपासक आनन्द से कहा–गृहस्थ को अवधि-ज्ञान उत्पन्न हो सकता है, पर इतना विशाल नहीं । इसलिए आनन्द ! तुम इस स्थान की–आलोचना करो, तदर्थ तपःकर्म स्वीकार करो । श्रमणोपासक आनन्द भगवान गौतम से बोला–भगवन् ! क्या जिन-शासन में सत्य, तथ्य–सद्भूत भावों के लिए भी आलोचना स्वीकार करनी होती है ? गौतम ने कहा–ऐसा नहीं होता । आनन्द बोला–भगवन् ! जिनशासन में सत्य भावों के लिए आलोचना स्वीकार नहीं करनी होती तो भन्ते ! इस स्थान–के लिए आप ही आलोचना स्वीकार करें ।

श्रमणोपासक आनन्द के यों कहने पर भगवान गौतम के मन में शंका, कांक्षा, विचिकित्सा–उत्पन्न हुआ । वे आनन्द के पास से रवाना हुए । जहाँ दूतीपलाश चैत्य था, भगवान महावीर थे, वहाँ आए । श्रमण भगवान महावीर के न अधिक दूर, न अधिक नजदीक गमन-आगमन का प्रतिक्रमण किया, एषणीय-अनेषणीय की आलोचना की । आहारपानी भगवान को दिखलाकर वन्दन-नमस्कार कर वह सब कहा जो भगवान से आज्ञा लेकर भिक्षा के लिए जाने के पश्चात् घटित हुआ था । भगवन् ! उक्त स्थान–के लिए क्या श्रमणोपासक आनन्द को आलोचना स्वीकार करनी चाहिए या मुझे ? भगवान महावीर बोले–गौतम ! इस स्थान–के लिए तुम ही आलोचना करो तथा इसके लिए श्रमणोपासक आनन्द से क्षमापना भी । भगवान गौतम ने श्रमण भगवान महावीर का कथन, 'आप ठीक फरमाते हैं', कहकर विनयपूर्वक सूना । उस स्थान–के लिए आलोचना स्वीकार की एवं श्रमणोपासक आनन्द से क्षमा-याचना की । तत्पश्चात् श्रमण भगवान महावीर किसी समय अन्य जनपदों में विहार कर गए ।

सूत्र - १९

यों श्रमणोपासक आनन्द ने अनेकविध शीलव्रत यावत् आत्मा को भावित किया । बीस वर्ष तक श्रमणोपासक पर्याय–पालन किया, ग्यारह उपासक-प्रतिमाओं का अनुसरण किया, एक मास की संलेखना और एक मास का अनशन संपन्न कर, आलोचना, प्रतिक्रमण कर मरण-काल आने पर समाधिपूर्वक देह-त्याग किया । वह सौधर्म देवलोक में सौधर्मावतंसक महाविमान के ईशान-कोण में स्थित अरुण-विमान में देव रूप में उत्पन्न हुआ । वहाँ अनेक देवों की आयु-स्थिति चार पल्योपम की होती है । श्रमणोपासक आनन्द की आयु-स्थिति भी चार पल्योपम की है । भन्ते ! आनन्द उस देवलोक से आयु, भव, एवं स्थिति के क्षय होने पर देवशरीर का त्याग कर कहाँ जाएगा? कहाँ उत्पन्न होगा ? गौतम ! आनन्द महाविदेह क्षेत्र में सिद्ध होगा–सिद्ध-गति या मुक्ति प्राप्त करेगा।

अध्ययन-१ का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

अध्ययन-२ – कामदेव

सूत्र - २०

हे भगवन् ! यावत् सिद्धि-प्राप्त भगवान महावीर ने सातवे अंग उपासकदशा के प्रथम अध्ययन का यदि यह अर्थ–आशय प्रतिपादित किया तो भगवन् ! उन्होंने दूसरे अध्ययन का क्या अर्थ बतलाया है ? जम्बू ! उस काल–उस समय–चम्पा नगरी थी । पूर्णभद्र नामक चैत्य था । राजा जितशत्रु था । कामदेव गाथापति था । उसकी पत्नी का नाम भद्रा था । गाथापति कामदेव का छः करोड़ स्वर्ण–खजाने में, छह करोड़ स्वर्ण-मुद्राएं व्यापार में, तथा छह करोड़ स्वर्ण-मुद्राएं घर के वैभव में–लगी थीं । उसके छह गोकुल थे । प्रत्येक गोकुल में दस हजार गायें थीं । भगवान महावीर पधारे । समवसरण हुआ । गाथापति आनन्द की तरह कामदेव भी अपने घर से चला–भगवान के पास पहुँचा, श्रावक-धर्म स्वीकार किया ।

सूत्र - २१

(तत्पश्चात् किसी समय) आधी रात के समय श्रमणोपासक कामदेव के समक्ष एक मिथ्यादृष्टि, मायावी देव प्रकट हुआ । उस देव ने एक विशालकाय पिशाच का रूप धारण किया । उसका विस्तृत वर्णन इस प्रकार है–उस पिशाच का सिर गाय को चारा देने की बाँस की टोकरी जैसा था । बाल–चावल की मंजरी के तन्तुओं के समान रूखे और मोटे थे, भूरे रंग के थे, चमकीले थे । ललाट बड़े मटके के खप्पर जैसा बड़ा था । भौंहें गिलहरी की पूँछ की तरह बिखरी हुई थीं, देखने में बड़ी विकृत और बीभत्स थीं । 'मटकी' जैसी आँखें, सिर से बाहर नीकली थीं, देखने में विकृत और बीभत्स थीं । कान टूटे हुए सूप–समान बड़े भद्दे और खराब दिखाई देते थे । नाक मेढ़े की नाक की तरह थी । गड्ढों जैसे दोनों नथूने ऐसे थे, मानों जुड़े हुए दो चूल्हे हों । घोड़े की पूँछ जैसी उनकी मूँछें भूरी थीं, विकृत और बीभत्स लगती थीं । उसके होठ ऊंट के होठों की तरह लम्बे थे । दाँत हल की लोहे की कुश जैसे थे । जीभ सूप के टुकड़े जैसी थी । ठुड्डी हल की नोक की तरह थी । कढ़ाही की ज्यों भीतर धँसे उसके गाल खड्डों जैसे लगते थे, फटे हुए, भूरे रंग के, कठोर तथा विकराल थे ।

उसके कन्धे मृदंग जैसे थे । वक्षःस्थल–नगर के फाटक के समान चौड़ी थी । दोनों भुजाएं कोष्ठिका–समान थीं । उसकी दोनों हथेलियाँ मूँग आदि दलने की चक्की के पाट जैसी थीं । हाथों की अंगुलियाँ लोढी के समान थीं। उसके नाखून सीपियों जैसे थे । दोनों स्तन नाई की उस्तरा आदि की तरह छाती पर लटक रहे थे । पेट लोहे के कोष्ठक–समान गोलाकार । नाभि बर्तन के समान गहरी थी । उसका नेत्र–छींके की तरह था । दोनों अण्डकोष फैले हुए दो थैलों जैसे थे । उसकी दोनों जंघाएं एक जैसी दो कोठियों के समान थीं । उसके घुटने अर्जुन–वृक्ष-विशेष के गाँठ जैसे, टेढ़े, देखने में विकृत व बीभत्स थे । पिंडलियाँ कठोर थीं, बालों से भरी थीं । उसके दोनों पैर दाल आदि पीसने की शीला के समान थे । पैर की अंगुलियाँ लोढ़ी जैसी थीं । अंगुलियों के नाखून सीपियों के सदृश थे ।

उस पिशाच के घुटने मोटे एवं ओछे थे, गाड़ी के पीछे ढीले बंधे काठ की तरह लड़खड़ा रहे थे । उसकी भौंहें विकृत–भग्न और टेढ़ी थीं । उसने अपना दरार जैसा मुँह फाड़ रखा था, जीभ बाहर नीकाल रखी थी । वह गिरगिटों की माला पहने था । चूहों की माला भी उसने धारण कर रखी थी । उसके कानों में कुण्डलों के स्थान पर नेवले लटक रहे थे । उसने अपनी देह पर साँपों को दुपट्टे की तरह लपेट रखा था । वह भुजाओं पर अपने हाथ ठोक रहा था, गरज रहा था, भयंकर अट्टहास कर रहा था । उसका शरीर पाँचों रंगों के बहुविध केशों से व्याप्त था। वह पिशाच नीले कमल, भैंसे के सींग तथा अलसी के फूल जैसी गहरी नीली, तेज धार वाली तलवार लिए, जहाँ पोषधशाला थी, श्रमणोपासक कामदेव था, वहाँ आया । अत्यन्त क्रुद्ध, रुष्ट, कुपित तथा विकराल होता हुआ, मिसमिसाहट करता हुआ–तेज साँस छोड़ता हुआ श्रमणोपासक कामदेव से बोला–अप्रार्थित–उस मृत्यु को चाहने वाले ! पुण्यचतुर्दशी जिस दिन हीन–थी–घटिकाओं में अमावास्या आ गई थी, उस अशुभ दिन में जन्मे हुए अभागे! लज्जा, शोभा, धृति तथा कीर्ति से परिवर्जित ! धर्म, पुण्य, स्वर्ग और मोक्ष की कामना ईच्छा एवं पिपासा–रखने वाले ! शील, व्रत, विरमण, प्रत्याख्यान तथा पोषधोपवास से विचलित होना, विक्षुभित होना, उन्हें

खण्डित करना, भग्न करना, उज्झित करना–परित्याग करना तुम्हें नहीं कल्पता है–इनका पालन करने में तुम कृतप्रतिज्ञ हो । पर, यदि तुम आज शील, एवं पोषधोपवास का त्याग नहीं करोगे, मैं इस तलवार से तुम्हारे टुकड़े-टुकड़े कर दूँगा, जिससे हे देवानुप्रिय ! तुम आर्त्तध्यान एवं विकट दुःख से पीड़ित होकर असमय में ही जीवन से पृथक् हो जाओगे–प्राणों से हाथ धो बैठोगे । उस पिशाच द्वारा यों कहे जाने पर भी श्रमणोपासक कामदेव भीत, त्रस्त, उद्विग्न, क्षुभित एवं विचलित नहीं हुआ; घबराया नहीं । वह चूपचाप–शान्त भाव से धर्म-ध्यान में स्थित रहा।

सूत्र - २२

पिशाच का रूप धारण किये हुए देव ने श्रमणोपासक को यों निर्भय भाव से धर्म-ध्यान में निरत देखा । तब उसने दूसरी बार, तीसरी बार फिर कहा–मौत को चाहने वाले श्रमणोपासक कामदेव ! आज प्राणों से हाथ धौ बेठोगे । श्रमणोपासक कामदेव उस देव द्वारा दूसरी बार, तीसरी बार यों कहे जाने पर भी अभीत रहा, अपने धर्मध्यान में उपगत रहा ।

सूत्र - २३

जब पिशाच रूपधारी उस देव ने श्रमणोपासक को निर्भय भाव से उपासना-रत देखा तो वह अत्यन्त क्रुद्ध हुआ, उसके ललाट में त्रिबलिक–चढ़ी भृकुटि तन गई । उसने तलवार से कामदेव पर वार किया और उसके टुकड़े-टुकड़े कर डाले । श्रमणोपासक कामदेव ने उस तीव्र तथा दुःसह वेदना को सहनशीलता पूर्वक झेला । जब पिशाच रूपधारी देव ने देखा, श्रमणोपासक कामदेव निर्भीक भाव से उपासना में रत है, वह श्रमणोपासक कामदेव को निर्ग्रन्थ प्रवचन–से विचलित, क्षुभित, विपरिणामित–नहीं कर सका है, उसके मनोभावों को नहीं बदल सका है, तो वह श्रान्त, क्लान्त और खिन्न होकर धीरे-धीरे पीछे हटा । पीछे हटकर पौषधशाला से बाहर नीकला । देवमायाजन्य पिशाच-रूप का त्याग किया । एक विशालकाय, हाथी का रूप धारण किया । वह हाथी सुपुष्ट सात अंगों से युक्त था । उसकी देह-रचना सुन्दर और सुगठित थी । वह आगे से उदग्र–पीछे से सूअर के समान झुका हुआ था । उसकी कुक्षि–बकरी की कुक्षि की तरह सटी हुई थी । उसका नीचे का होठ और सूँड़ लम्बे थे । मुँह से बाहर नीकले हुए दाँत उजले और सफेद थे । वे सोने की म्यान में प्रविष्ट थे । उसकी सूँड़ का अगला भाग कुछ खींचे हुए धनुष की तरह सुन्दर रूप में मुड़ा हुआ था । उसके पैर कछुए के समान प्रतिपूर्ण और चपटे थे । उसके बीस नाखून थे । उसकी पूँछ देह से सटी हुई थी । वह हाथी मद से उन्मत्त था । बादल की तरह गरज रहा था । उसका वेग मन और वचन के वेग को जीतने वाला था ।

ऐसे हाथी के रूप की विक्रिया करके पूर्वोक्त देव जहाँ पोषधशाला थी, जहाँ श्रमणोपासक कामदेव था, वहाँ आया । श्रमणोपासक कामदेव से पूर्व वर्णित पिशाच की तरह बोला–यदि तुम अपने व्रतों का भंग नहीं करते हो तो मैं तुमको अपनी सूँड़ से पकड़ लूँगा । पोषधशाला से बाहर ले जाऊंगा । ऊपर आकाश में ऊछालूँगा । उछालकर अपने तीखे और मूसल जैसे दाँतों से झेलूँगा । नीचे पृथ्वी पर तीन बार पैरों से रौदूँगा, जिससे तुम आर्त्त ध्यान होकर विकट दुःख से पीड़ित होते हुए असमय में ही जीवन से पृथक् हो जाओगे–हाथी का रूप धारण किए हुए देव द्वारा यों कहे जाने पर भी श्रमणोपासक कामदेव निर्भय भाव से उपासना-रत रहा ।

सूत्र - २४

हस्तीरूपधारी देव ने जब श्रमणोपासक कामदेव को निर्भीकता से अपनी उपासना में निरत देखा, तो उसने दूसरी बार, तीसरी बार फिर श्रमणोपासक कामदेव को वैसा ही कहा, जैसा पहले कहा था । पर, श्रमणोपासक कामदेव पूर्ववत् निर्भीकता से अपनी उपासना में निरत रहा । हस्ती रूपधारी उस देव ने जब श्रमणोपासक कामदेव को निर्भीकता से उपासना में लीन देखा तो अत्यन्त क्रुद्ध होकर अपनी सूँड़ से उसको पकड़ा । आकाश में ऊंचा उछाला । नीचे गिरते हुए को अपनी तीखे और मूसल जैसे दाँतों से झेला और झेलकर नीचे जमीन पर तीन बार पैरों से रौंदा । श्रमणोपासक कामदेव ने वह असह्य वेदना झेली ।

जब हस्ती रूपधारी देव श्रमणोपासक कामदेव को निर्ग्रन्थ–प्रवचन से विचलित, क्षुभित तथा विपरिणा-

मित नहीं कर सका, तो वह श्रान्त, क्लान्त और खिन्न होकर धीरे-धीरे पीछे हटा । हटकर पोषधशाला से बाहर नीकला । विक्रियाजन्य हस्ति-रूप का त्याग किया । वैसा कर दिव्य, विकराल सर्प का रूप धारण किया । वह सर्प उग्रविष, प्रचण्डविष, घोरविष और विशालकाय था । वह स्याही और मूसा जैसा काला था । उसके नेत्रों में विष और क्रोध भरा था । वह काजल के ढ़ेर जैसा लगता था । उसकी आँखें लाल-लाल थीं । उसकी दुहरी जीभ चंचल थी–कालेपन के कारण वह पृथ्वी की वेणी जैसा लगता था । वह अपना उत्कट–स्फुट–कुटिल–जटिल, कर्कश–विकट–फन फैलाए हुए था । लुहार की धौंकनी की तरह वह फुंकार रहा था । उसका प्रचण्ड क्रोध रोके नहीं रुकता था । वह सर्प रूपधारी देव जहाँ पोषधशाला थी, जहाँ श्रमणोपासक कामदेव था, वहाँ आया । श्रमणोपासक कामदेव से बोला–अरे कामदेव ! यदि तुम शील, व्रत भंग नहीं करते हो, तो मैं अभी सर्राट करता हुआ तुम्हारे शरीर पर चढूँगा । पूँछ की ओर से तुम्हारे गले में लपेट लगाऊंगा । अपने तीखे, झहरीले दाँतों से तुम्हारी छाती पर डंक मारूँगा, जिससे तुम आर्त्त ध्यान और विकट दुःख से पीड़ित होते हुए असमय में ही जीवन से पृथक् हो जाओगे–मर जाओगे ।

सूत्र - २५

सर्प रूपधारी देव ने जब श्रमणोपासक कामदेव को निर्भय देखा तो वह अत्यन्त क्रुद्ध होकर सर्राटे के साथ उसके शरीर पर चढ़ गया । पीछले भाग से उसके गले में तीन लपेट लगा दिए । लपेट लगाकर अपने तीखे, झहरीले दाँतों से उसकी छाती पर डंक मारा । श्रमणोपासक कामदेव ने उस तीव्र वेदना को सहनशीलता के साथ झेला । सर्प रूपधारी देव ने जब देखा–श्रमणोपासक कामदेव निर्भय है, वह उसे निर्ग्रन्थ–प्रवचन से विचलित, क्षुभित एवं विपरिणामित नहीं कर सका है तो श्रान्त, क्लान्त और खिन्न होकर वह धीरे-धीरे पीछे हटा । पोषध-शाला से बाहर नीकला। देव-मायाजनित सर्प-रूप का त्याग किया । फ़िर उसने उत्तम, दिव्य देव-रूप धारण किया उस देव के वक्षःस्थल पर हार सुशोभित हो रहा था यावत् दिशाओं को उद्योतित, प्रभासित, दर्शनीय, मनोज्ञ, प्रतिरूप किया । वैसा कर श्रमणोपासक कामदेव की पोषधशाला में प्रविष्ट हुआ । प्रविष्ट होकर आकाश में अवस्थित हो छोटी-छोटी घण्टिकाओं से युक्त पाँच वर्णों के उत्तम वस्त्र धारण किए हुए वह श्रमणोपासक कामदेव से यों बोला–श्रमणोपासक कामदेव ! देवानुप्रिय ! तुम धन्य हो, पुण्यशाली हो, कृत-कृत्य हो, कृतलक्षण–वाले हो। देवानुप्रिय ! तुम्हें निर्ग्रन्थ–प्रवचन में ऐसी प्रतिपत्ति–विश्वास–आस्था सुलब्ध है, सुप्राप्त है, स्वायत्त है, निश्चय ही तुमने मनुष्य-जन्म और जीवन का सुफल प्राप्त कर लिया ।

देवानुप्रिय ! बात यों हुई–शक्र–देवेन्द्र–देवराज–इन्द्रासन पर स्थित होते हुए चौरासी हजार सामानिक देवों यावत् बहुत से अन्य देवों और देवियों के बीच यों आख्यात, भाषित, प्रज्ञप्त या प्ररूपित किया–कहा । देवो ! जम्बू द्वीप के अन्तर्गत भरतक्षेत्र में, चंपा नगरी में श्रमणोपासक कामदेव पोषधशाला में पोषध स्वीकार किए, ब्रह्मचर्य का पालन करता हुआ कुश के बिछौने पर अवस्थित हुआ श्रमण भगवान महावीर के पास अंगीकृत धर्म-प्रज्ञप्ति के अनुरूप उपासनारत है । कोई देव, दानव, गन्धर्व द्वारा निर्ग्रन्थ-प्रवचन से यह विचलित, क्षुभित तथा विपरिणामित नहीं किया जा सकता । शक्र, देवेन्द्र, देवराज के इस कथन में मुझे श्रद्धा, प्रतीति–नहीं हुआ । वह मुझे अरुचिकर लगा । मैं शीघ्र यहाँ आया । देवानुप्रिय ! जो ऋद्धि, द्युति, यश, बल, वीर्य, पुरुषोचित पराक्रम तुम्हें उपलब्ध–प्राप्त तथा अभिसमन्वागत–है, वह सब मैंने देखा । देवानुप्रिय ! मैं तुमसे क्षमा-याचना करता हूँ । मुझे क्षमा करो । आप क्षमा करने में समर्थ हैं । मैं फिर कभी ऐसा नहीं करूँगा । यों कहकर पैरों में पड़कर, उसने हाथ जोड़कर बार-बार क्षमा-याचना की । जिस दिशा से आय था, उसी दिशा की ओर चला गया । तब श्रमणोपासक कामदेव ने यह जानकर कि अब उपसर्ग–विघ्न नहीं रहा है, अपनी प्रतिमा का पारण–समापन किया ।

सूत्र - २६

श्रमणोपासक कामदेव ने जब यह सूना कि भगवान महावीर पधारे हैं, तो सोचा, मेरे लिए यह श्रेयस्कर है, मैं श्रमण भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार कर, वापस लौट कर पोषध का–समापन करूँ । यों सोचकर उसने

शुद्ध तथा सभा योग्य मांगलिक वस्त्र भली-भाँति पहने, अपने घर से नीकलकर चम्पा नगरी के बीच से गुझरा, जहाँ पूर्णभद्र चैत्य था, शंख श्रावक की तरह आया । आकर पर्युपासना की । श्रमण भगवान महावीर ने श्रमणोपासक कामदेव तथा परीषद् को धर्म-देशना दी ।

सूत्र - २७

श्रमण भगवान महावीर ने कामदेव से कहा–कामदेव ! आधी रात के समय एक देव तुम्हारे सामने प्रकट हुआ था । उस देव ने एक विकराल पिशाच का रूप धारण किया । वैसा कर, अत्यन्त क्रुद्ध हो, उसने तलवार नीकालकर तुमसे कहा–कामदेव ! यदि तुम अपने शील आदि व्रत भग्न नहीं करोगे तो जीवन से पृथक् कर दिए जाओगे । उस देव द्वारा यों कहे जाने पर भी तुम निर्भय भाव से उपासनारत रहे । कामदेव क्या यह ठीक है ? भगवन् ! ऐसा ही हुआ । भगवान महावीर ने बहुत से श्रमणों और श्रमणियों को संबोधित कर कहा–आर्यो ! यदि श्रमणोपासक गृही घर में रहते हुए भी देवकृत, मनुष्यकृत, तिर्यञ्चकृत–उपसर्गों को भली-भाँति सहन करते हैं तो आर्यो! द्वादशांग-रूप गणिपिटक का अध्ययन करने वाले श्रमण निर्ग्रन्थों द्वारा उपसर्गों को सहन करना शक्य है ही श्रमण भगवान महावीर का यह कथन उन बहु-संख्यक साधु-साध्वीओं ने 'ऐसा ही है भगवन् !' यों कह कर विनयपूर्वक स्वीकार किया । श्रमणोपासक कामदेव अत्यन्त प्रसन्न हुआ, उसने श्रमण भगवान महावीर से प्रश्न पूछे, समाधान प्राप्त किया । श्रमण भगवान महावीर को तीन बार वंदन-नमस्कार कर, जिस दिशा से वह आया था, उसी दिशा की ओर लौट गया । श्रमण भगवान महावीर ने एक दिन चम्पा से प्रस्थान किया । प्रस्थान कर वे अन्य जनपदों में विहार कर गए ।

सूत्र - २८

तत्पश्चात् श्रमणोपासक कामदेव ने पहली उपासकप्रतिमा की आराधना स्वीकार की । श्रमणोपासक कामदेव ने अणुव्रत द्वारा आत्मा को भावित किया । बीस वर्ष तक श्रमणोपासकपर्याय–पालन किया । ग्यारह उपासक-प्रतिमाओं का भली-भाँति अनुसरण किया । एक मास की संलेखना और एक मास का अनशन सम्पन्न कर आलोचना, प्रतिक्रमण कर मरण-काल आने पर समाधिपूर्वक देह-त्याग किया । वह सौधर्म देवलोक में सौधर्मावतंसक महाविमान के ईशान-कोण में स्थित अरुणाभ विमान में देवरूप में उत्पन्न हुआ । वहाँ अनेक देवों की आयु चार पल्योपम की होती है । कामदेव की आयु भी देवरूप में चार पल्योपम की बतलाई गई है । गौतम ने भगवान महावीर से पूछा–भन्ते ! कामदेव उस देव-लोक से आयु, भव एवं स्थिति के क्षय होने पर देव-शरीर का त्याग कर कहाँ जाएगा ? कहाँ उत्पन्न होगा ? गौतम ! कामदेव महाविदेह-क्षेत्र में सिद्ध होगा–मोक्ष प्राप्त करेगा ।

अध्ययन-२ का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

अध्ययन-३ – चुलनीपिता

सूत्र - २९

उपोद्घातपूर्वक तृतीय अध्ययन का प्रारम्भ यों है – जम्बू ! उस काल–उस समय, वाराणसी नगरी थी । कोष्ठक नामक चैत्य था, राजा जितशत्रु था । वाराणसी नगरी में चुलनीपिता नामक गाथापति था । वह अत्यन्त समृद्ध एवं प्रभावशाली था । उसकी पत्नी का नाम श्यामा था । आठ करोड़ स्वर्ण-मुद्राएं स्थायी पूंजी के रूप में, आठ करोड़ स्वर्ण-मुद्राएं व्यापार में तथा आठ करोड़ स्वर्ण-मुद्राएं घर के वैभव–धन, धान्य आदि में लगी थीं । उसके आठ गोकुल थे । प्रत्येक गोकुल में दस-दस हजार गाएं थीं । गाथापति आनन्द की तरह वह राजा, ऐश्वर्य-शाली पुरुष आदि विशिष्ट जनों के सभी प्रकार के आर्यों का सत्परामर्श आदि द्वारा वर्धापक–था । भगवान महावीर पधारे–परीषद् जुड़ी । आनन्द की तरह चुलनीपिता भी घर से नीकला–यावत् श्रावकधर्म स्वीकार किया । गौतम ने जैसे आनन्द के सम्बन्ध में भगवान से प्रश्न किए थे, उसी प्रकार चुलनीपिता के भावी जीवन के सम्बन्ध में भी किए। आगे की घटना गाथापति कामदेव की तरह है । चुलनीपिता पोषधशाला में ब्रह्मचर्य एवं पोषध स्वीकार कर, श्रमण भगवान महावीर के पास अंगीकृत धर्म-प्रज्ञप्ति–धर्म-शिक्षा के अनुरूप उपासना-रत हुआ ।

आधी रात के समय श्रमणोपासक चुलनीपिता के समक्ष एक देव प्रकट हुआ । उस देव ने एक तलवार नीकालकर जैसे पिशाच रूपधारी देव ने कामदेव से कहा था, वैसे ही श्रमणोपासक चुलनीपिता को कहा–यदि तुम अपने व्रत नहीं तोड़ोगे, तो मैं आज तुम्हारे बड़े पुत्र को घर से नीकाल लाऊंगा । तुम्हारे आगे उसे मार डालूँगा । उसके तीन मांस-खंड करूँगा, उबलते आद्रहण–में खौलाऊंगा । उसके मांस और रक्त से तुम्हारे शरीर को सींचूँगा-जिससे तुम आर्त्तध्यान एवं विकट दुःख से पीड़ित होकर असमय में ही प्राणों से हाथ धौ बैठोगे । उस देव द्वारा यों कहे जान पर भी श्रमणोपासक चुलनीपिता निर्भय भाव से धर्मध्यान में स्थित रहा ।

जब उस देव ने श्रमणोपासक चुलनीपिता को निर्भय देखा, तो उसने उससे दूसरी बार और फिर तीसरी बार वैसा ही कहा । पर, चुलनीपिता पूर्ववत् निर्भीकता के साथ धर्म-ध्यान में स्थित रहा । देव ने चुलनीपिता को जब इस प्रकार निर्भय देखा तो वह अत्यन्त क्रुद्ध हुआ । वह चुलनीपिता के बड़े पुत्र को उसके घर से उठा लाया और उसके सामने उसे मार डाला । उसके तीन मांस-खंड़ किए, उबलते पानी से भरी कढ़ाही में खौलाया । उसके मांस और रक्त से चुलनीपिता के शरीर को सींचा । चुलनीपिता ने वह तीव्र वेदना तितिक्षापूर्वक सहन की । देव ने श्रमणोपासक चुलनीपिता को जब यों निर्भीक देखा तो उसने दूसरी बार कहा–मौत को चाहने वाले चुलनीपिता ! यदि तुम अपने व्रत नहीं तोड़ोगे, तो मैं तुम्हारे मंझले पुत्र को घर से उठा लाऊंगा और उसकी भी हत्या कर डालूँगा। इस पर भी चुलनीपिता जब अविचल रहा तो देव ने वैसा ही किया । उसने तीसरी बार फिर छोटे लड़के के सम्बन्ध में वैसा ही करने को कहा । चुलनीपिता नहीं घबराया । देव ने छोटे लड़के के साथ भी वैसा ही किया । चुलनीपिता ने वह तीव्र वेदना तितिक्षापूर्वक सहन की ।

देव ने जब श्रमणोपासक चुलनीपिता को इस प्रकार निर्भय देखा तो उसने चौथी बार उससे कहा–मौत को चाहने वाले चुलनीपिता ! यदि तुम अपने व्रत नहीं तोड़ोगे तो मैं तुम्हारे लिए देव और गुरु सदृश पूजनीय, तुम्हारे हितार्थ अत्यन्त दुष्कर कार्य करने वाली माता भद्रा सार्थवाही को घर से लाकर तुम्हारे सामने उसकी हत्या करूँगा, तीन मांस-खंड करूँगा । यावत् जिससे तुम आर्त्तध्यान एवं विकट दुःख से पीड़ित होकर असमय में ही प्राणों से हाथ धो बैठोगे । उस देव द्वारा यों कहे जान पर भी श्रमणोपासक चुलनीपिता निर्भयता से धर्मध्यान में स्थित रहा । उस देव ने श्रमणोपासक चुलनीपिता को जब निर्भय देखा तो दूसरी बार, तीसरी बार फिर वैसा ही कहा–चुलनीपिता ! तुम प्राणों से हाथ धो बैठोगे ।

सूत्र - ३०

उस देव ने जब दूसरी बार, तीसरी बार ऐसा कहा, तब श्रमणोपासक चुलनीपिता के मन में विचार आया–यह पुरुष बड़ा अधम है, नीच-बुद्धि है, नीचतापूर्ण पाप-कार्य करने वाला है, जिसने मेरे बड़े पुत्र को घर से लाकर

मेरे आगे मार डाला । उसके मांस और रक्त से मेरे शरीर सींचा-छींटा, जो मेरे मंझले पुत्र को घर से ले आया, जो मेरे छोटे पुत्र को घर से ले आया, उसी तरह उसके मांस और रक्त से मेरा शरीर सींचा, जो देव और गुरु सदृश पूजनीय, मेरे हितार्थ अत्यन्त दुष्कर कार्य करने वाली, अति कठिन क्रियाएं करने वाली मेरी माता भद्रा सार्थवाही को भी घर से लाकर मेरे सामने मारना चाहता है । इसलिए, अच्छा यही है, मैं इस पुरुष को पकड़ लूँ । यों विचारकर वह पकड़ने के लिए दौड़ा । इतने में देव आकाश में उड़ गया । चुलनीपिता के पकड़ने को फैलाए हाथों में खम्भा आ गया । वह जोर-जोर से शोक करने लगा ।

भद्रा सार्थवाही ने जब वह कोलाहल सूना, तो जहाँ श्रमणोपासक चुलनीपिता था, वहाँ वह आई, उससे बोली–पुत्र ! तुम जोर-जोर से यों क्यों चिल्लाए ? अपनी माता भद्रा सार्थवाही से श्रमणोपासक चुलनीपिता ने कहा –माँ ! न जाने कौन पुरुष था, जिसने अत्यन्त क्रुद्ध होकर मुझसे कहा–मृत्यु को चाहने वाले श्रमणोपासक चुलनी-पिता ! यदि तुम आज शील का त्याग नहीं करोगे, भंग नहीं करोगे तो तुम आर्त्तध्यान एवं विकट दुःख से पीड़ित होकर असमय में ही प्राणों से हाथ धो बैठोगे । उस पुरुष द्वारा यों कहे जाने पर भी मैं निर्भीकता के साथ अपनी उपासन में नीरत रहा । जब उस पुरुष ने मुझे निर्भयतापूर्वक उपासनारत देखा तो उसने मुझे दूसरी बार, तीसरी बार फिर कहा–श्रमणोपासक चुलनीपिता ! जैसा मैंने तुम्हें कहा है, मैं तुम्हारे शरीर को मांस और रक्त से सींचता हूँ और उसने वैसा ही किया । मैंने वेदना झेली । छोटे पुत्र के मांस और रक्त से शरीर सींचने तक सारी घटना उसी रूप में घटित हुई । मैं वह तीव्र वेदना सहता गया ।

उस पुरुष ने जब मुझे नीड़र देखा तो चौथी बार उसने कहा–मौत को चाहने वाले श्रमणोपासक चुलनी-पिता ! तुम यदि अपने व्रत का भंग नहीं करते हो तो आज प्राणों से हाथ धो बैठोगे । उसके द्वारा यों कहे जाने पर भी मैं निर्भीकतापूर्वक धर्म-ध्यान में स्थित रहा । उस पुरुष ने दूसरी बार, तीसरी बार फिर कहा–श्रमणोपासक चुलनीपिता ! आज तुम प्राणों से हाथ धो बैठोगे । उस पुरुष द्वारा दूसरी बार, तीसरी बार यों कहे जाने पर मेरे मन में ऐसा विचार आया, अरे ! इस अधमने मेरे ज्येष्ठ पुत्र को, मझले पुत्र को और छोटे पुत्र को घर से ले आया, उनकी हत्या की । अब तुमको भी घर से लाकर मेरे सामने मार ड़ालना चाहता है । इसलिए अच्छा यही है, मैं इस पुरुष को पकड़ लूँ । यों विचार कर मैं उसे पकड़ने के लिए उठा, इतने में वह आकाश में उड़ गया । उसे पकड़ने को फैलाए हुए मेरे हाथों में खम्भा आ गया । मैंने जोर-जोर से शोर किया ।

तब भद्रा सार्थवाही श्रमणोपासक चुलनीपिता से बोली–पुत्र ! ऐसा कोई पुरुष नहीं था, जो यावत् तुम्हारे छोटे पुत्र को घर से लाया हो, तुम्हारे आगे उसकी हत्या की हो । यह तो तुम्हारे लिए कोई देव-उपसर्ग था । इसलिए, तुमने यह भयंकर दृश्य देखा । अब तुम्हारा व्रत, नियम और पोषध भग्न हो गया है–खण्डित हो गया है । इसलिए पुत्र ! तुम इस स्थान–व्रत-भंग रूप आचरण की आलोचना करो, तदर्थ तपःकर्म स्वीकार करो । श्रमणो-पासक चुलनीपिता ने अपनी माता भद्रा सार्थवाही का कथन 'आप ठीक कहती हैं' यों कहकर विनयपूर्वक सूना । उस स्थान–की आलोचना की, (यावत्) तपःक्रिया स्वीकार की ।

सूत्र - ३१

तत्पश्चात् श्रमणोपासक चुलनीपिता ने आनन्द की तरह क्रमशः पहली, यावत् ग्यारहवीं उपासक-प्रतिमा की यथाविधि आराधना की । श्रमणोपासक चुलनीपिता सौधर्म देवलोक में सौधर्मावतंसक महाविमान के ईशान कोण में स्थित अरुणप्रभ विमान में देवरूप में उत्पन्न हुआ । वहाँ उसकी आयु-स्थिति चार पल्योपम की बतलाई गई है । महाविदेह क्षेत्र में वह सिद्ध होगा ।

अध्ययन-३ का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

अध्ययन-४ – सुरादेव

सूत्र - ३२

उपोद्घातपूर्वक चतुर्थ अध्ययन का प्रारम्भ यों है । जम्बू ! उस काल–उस समय–वाराणसी नामक नगरी थी । कोष्ठक नामक चैत्य था । राजा का नाम जितशत्रु था । वहाँ सुरादेव गाथापति था । वह अन्यन्त समृद्ध था । छह करोड़ स्वर्ण-मुद्राएं स्थायी पूंजी के रूप में उसके खजाने में थीं, यावत् उसके छह गोकुल थे । प्रत्येक गोकुल में दस-दस हजार गायें थीं । उसकी पत्नी का नाम धन्या था । भगवान महावीर पधारे । आनन्द की तरह सुरादेव ने भी श्रावक-धर्म स्वीकार किया । कामदेव की तरह वह भगवान महावीर के पास अंगीकृत धर्म-प्रज्ञप्ति–के अनुरूप उपासना-रत हुआ ।

एकदा आधी रात के समय श्रमणोपासक सुरादेव के समक्ष एक देव प्रकट हुआ । उसने तलवार नीकाल-कर श्रमणोपासक सुरादेव से कहा–मृत्यु को चाहने वाले श्रमणोपासक सुरादेव ! यदि तुम आज शील, व्रत आदि का भंग नहीं करते हो तो मैं तुम्हारे बड़े बेटे को घर से उठा लाऊंगा । तुम्हारे सामने उसे मार डालूँगा । उसके पाँच मांस-खण्ड करूँगा, उबलते पानी से भरी कढ़ाही में खौलाऊंगा, उसके मांस और रक्त से तुम्हारे शरीर को सींचूंगा, जिससे तुम असमय में ही जीवन से हाथ धो बैठोगे । इसी प्रकार उसने मझले और छोटे लड़के को भी मार डालने, उनको पाँच-पाँच मांस-खंड़ों में काट डालने की धमकी दी । चुलनीपिता के समान ही उसने किया, विशेषता यह कि यहाँ पाँच-पाँच खंड–किए । तब उस देव ने श्रमणोपासक सुरादेव को चौथी बार भी कहा–मृत्यु को चाहनेवाले श्रमणोपासक सुरादेव ! यदि अपने व्रतों का त्याग नहीं करोगे तो आज मैं तुम्हारे शरीरमें एक ही साथ श्वास–कास–यावत् कोढ़, ये सोलह भयानक रोग उत्पन्न कर दूँगा, जिससे तुम आर्त्तध्यान से यावत् जीवन से हाथ धो बैठोगे । तब भी श्रमणोपासक सुरादेव धर्म-ध्यान में लगा रहा तो उस देव ने दूसरी बार, तीसरी बार फिर वैसा ही कहा ।

सूत्र - ३३

उस देव द्वारा दूसरी बार, तीसरी बार यों कहे जाने पर श्रमणोपासक सुरादेव के मन में ऐसा विचार आया, यह अधम पुरुष यावत् अनार्यकृत्य करता है । मेरे शरीर में सोलह भयानक रोग उत्पन्न कर देना चाहता है । अतः मेरे लिए यही श्रेयस्कर है, मैं इस पुरुष को पकड़ लूँ । यों सोचकर वह पकड़ने के लिए उठा । इतने में वह देव आकाश में उड़ गया । सुरादेव के पकड़ने को फैलाए हाथों में खम्भा आ गया । वह जोर-जोर से चिल्लाने लगा । सुरादेव की पत्नी धन्या ने जब यह कोलाहल सूना तो जहाँ सुरादेव था, वह वहाँ आई । आकर पति से बोली–देवानुप्रिय ! आप जोर-जोर से क्यों चिल्लाए ?

श्रमणोपासक सुरादेव ने चुलनीपिता के समान पत्नी धन्या से सारी घटना बताई । धन्या बोली–देवानु-प्रिय ! किसी ने तुम्हारे बड़े, मझले और छोटे लड़के को नहीं मारा । न कोई पुरुष तुम्हारे शरीर में एक ही साथ सोलह भयानक रोग ही उत्पन्न कर रहा है । यह तो तुम्हारे लिए किसी ने उपसर्ग किया है । चुलनीपिता के समान यहाँ भी सब कथन समझना । अन्त में सुरादेव देह-त्याग कर सौधर्मकल्प में अरुणकान्त विमान में उत्पन्न हुआ । उसकी आयु-स्थिति चार पल्योपम की बतलाई गई है । महाविदेह-क्षेत्र में वह सिद्ध होगा–मोक्ष प्राप्त करेगा ।

अध्ययन-४ का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

अध्ययन-५ – चुल्लशतक

सूत्र - ३४

उपोद्घातपूर्वक पाँचवे अध्ययन का आरम्भ । जम्बू ! उस काल–उस समय–आलभिका नगरी थी । शंख-वन उद्यान था । राजा का नाम जितशत्रु था । चुल्लशतक गाथापति था । वह बड़ा समृद्ध एवं प्रभावशाली था । छह करोड़ स्वर्ण-मुद्राएं उसके खजाने में रखी थीं–यावत् उसके छह गोकुल थे । प्रत्येक गोकुल में दस-दस हजार गायें थीं । उसकी पत्नी का नाम बहुला था । भगवान महावीर पधारे । आनन्द की तरह चुल्लशतक ने भी श्रावक-धर्म स्वीकार किया । आगे का घटना-क्रम कामदेव की तरह है । यावत् अंगीकृत धर्म-प्रज्ञप्ति–के अनुरूप उपासना-रत हुआ ।

सूत्र - ३५

एक दिन की बात है, आधी रात के समय चुल्लशतक के समक्ष एक देव प्रकट हुआ । उसने तलवार नीकालकर कहा–अरे श्रमणोपासक चुल्लशतक ! यदि तुम अपने व्रतों का त्याग नहीं करोगे तो मैं आज तुम्हारे ज्येष्ठ पुत्र को घर से उठा लाऊंगा । चुलनीपिता के समान घटित हुआ । देव ने बड़े, मंझले तथा छोटे–तीनों पुत्रों को क्रमशः मारा, मांस-खण्ड किए । मांस और रक्त से चुल्लशतक की देह को छींटा । विशेषता यह कि यहाँ देव ने सात सात खंड किए । तब भी श्रमणोपासक चुल्लशतक निर्भय भाव से उपासनारत रहा । देव ने श्रमणोपासक चुल्लशतक को चौथी बार कहा–अरे श्रमणोपासक चुल्लशतक ! तुम अब भी अपने व्रतों को भंग नहीं करोगे तो मैं खजाने में रखी तुम्हारी छह करोड़ स्वर्ण-मुद्राओं, व्यापार में लगी तुम्हारी छह करोड़ स्वर्ण-मुद्राओं तथा घर के वैभव और साज-सामान में लगी छह करोड़ स्वर्ण-मुद्राओं को ले आऊंगा । लाकर आलभिका नगरी के शृंगाटक यावत् राजमार्गों में सब तरफ–बिखेर दूँगा । जिससे तुम आर्त्तध्यान एवं विकट दुःख से पीड़ित होकर असमय में ही जीवन से हाथ धो बैठोगे । उस देव द्वारा यों कहे जाने पर भी श्रमणोपासक चुल्लशतक निर्भीकतापूर्वक अपनी उपासना में लगा रहा ।

जब उस देव ने श्रमणोपासक चुल्लशतक को यों निर्भीक देखा तो उससे दूसरी बार, तीसरी बार फिर वैसा ही कहा और धमकाया–अरे ! प्राण खो बैठोगे ! उस देव ने जब दूसरी बार, तीसरी बार श्रमणोपासक चुल्लशतक को ऐसा कहा, तो उसके मन में चुलनीपिता की तरह विचार आया, इस अधम पुरुष ने मेरे बड़े, मझले और छोटे–तीनों पुत्रों को बारी-बारी से मार कर, उनके मांस और रक्त से सींचा । अब यह मेरी खजाने में रखी छह करोड़ सुवर्ण-मुद्राओं, यावत् उन्हें आलभिका नगरी के तिकोने आदि स्थानों में बिखेर देखा चाहता है । इसलिए, मेरे लिए यही श्रेयस्कर है कि मैं इस पुरुष को पकड़ लूँ । यों सोचकर वह उसे पकड़ने के लिए सुरादेव की तरह दौड़ा । आगे सुरादेव के समान घटित हुआ था । सुरादेव की पत्नी की तरह उसकी पत्नी ने भी उससे सब पूछा । उसने सारी बात बतलाई । आगे की घटना चुलनीपिता की तरह है । देह-त्याग कर चुल्लशतक सौधर्म देवलोक में अरुणसिद्ध विमान में देव के रूप में उत्पन्न हुआ । वहाँ उसकी आयुस्थिति चार पल्योपम की बतलाई गई है । यावत् वह महाविदेह क्षेत्र में सिद्ध होगा ।

अध्ययन-५ का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

अध्ययन-६ – कुंडकोलिक

सूत्र - ३७

जम्बू ! उस काल–उस समय–काम्पिल्यपुर नगर था । सहस्राम्रवन उद्यान था । जितशत्रु राजा था । कुंड-कोलिक गाथापति था । उसकी पत्नी पूषा थी । छह करोड़ स्वर्ण-मुद्राएं सुरक्षित धन के रूप में, छह करोड़ स्वर्ण-मुद्राएं व्यापार में, छह करोड़ स्वर्ण-मुद्राएं–धन, धान्य में लगी थीं । छह गोकुल थे । प्रत्येक गोकुल में दस-दस हजार गायें थीं । भगवान महावीर पधारे । कामदेव की तरह कुंडकोलिक ने भी श्रावक-धर्म स्वीकार किया । यावत् श्रमण निर्ग्रन्थों को शुद्ध आहार-पानी आदि देते हुए धर्माराधना में निरत रहने लगा ।

सूत्र - ३८

एक दिन श्रमणोपासक कुंडकोलिक दोपहर के समय अशोक-वाटिका में गया । पृथ्वी-शिलापट्टक पहुँचा। अपने नाम से अंकित अंगूठी और दुपट्टा उतारा । उन्हें पृथ्वीशिलापट्टक पर रखा । श्रमण भगवान महावीर के पास अंगीकृत धर्म-प्रज्ञप्ति–अनुरूप उपासना-रत हुआ । श्रमणोपासक कुंडकोलिक के समक्ष एक देव प्रकट हुआ । उस देव ने कुंडकोलिक की नामांकित मुद्रिका और दुपट्टा पृथ्वीशिलापट्टक से उठा लिया । वस्त्रों में लगी छोटी-छोटी घंटियों की झनझनाहट के साथ वह आकाश में अवस्थित हुआ, श्रमणोपासक कुंडकोलिक से बोला–देवानुप्रिय ! मंखलिपुत्र गोशालक की धर्म-प्रज्ञप्ति–सुन्दर है । उसके अनुसार उत्थान–कर्म, बल, वीर्य, पुरुषकार, पराक्रम, उपक्रम । सभी भाव–नियत है । उत्थान पराक्रम इन सबका अपना अस्तित्व है, सभी भाव नियत नहीं है–भगवान महावीर की यह धर्म-प्रज्ञप्ति–असुन्दर है ।

तब श्रमणोपासक कुंडकोलिक ने देव से कहा–उत्थान का कोई अस्तित्व नहीं है, सभी भाव नियत हैं–गोशालक की यह धर्म-शिक्षा यदि उत्तम है तो उत्थान आदि का अपना महत्त्व है, सभी भाव नियत नही है–भगवान महावीर की यह धर्म-प्ररूपणा अनुत्तम है–तो देव ! तुम्हें जो ऐसा दिव्य ऋद्धि, द्युति तथा प्रभाव उपलब्ध, संप्राप्त और स्वायत्त है, वह सब क्या उत्थान, पौरुष और पराक्रम से प्राप्त हुआ है, अथवा अनुत्थान, अकर्म, अबल, अवीर्य, अपौरुष या अपराक्रम से ? वह देव श्रमणोपासक कुंडकोलिक से बोला–देवानुप्रिय ! मुझे यह दिव्य ऋद्धि, द्युति एवं प्रभाव–यह सब बिना उत्थान, पौरुष एवं पराक्रम से ही उपलब्ध हुआ है । तब श्रमणोपासक कुंडकोलिक ने उस देव से कहा–देव ! यदि तुम्हें यह दिव्य ऋद्धि प्रयत्न, पुरुषार्थ, पराक्रम आदि किए बिना ही प्राप्त हो गई, तो जिन जीवों में उत्थान, पराक्रम आदि नहीं हैं, वे देव क्यों नहीं हुए ? देव ! तुमने यदि दिव्य ऋद्धि उत्थान, पराक्रम आदि द्वारा प्राप्त कि है तो ''उत्थान आदि का जिसमें स्वीकार नहीं है, सभी भाव नियत हैं, गोशालक की यह धर्म-शिक्षा सुन्दर है तथा जिसमें उत्थान आदि का स्वीकार है, सभी भाव नियत नहीं है, भगवान महावीर की वह शिक्षा असुन्दर है ।'' तुम्हारा यह कथन असत्य है ।

श्रमणोपासक कुंडकोलिक द्वारा यों कहे जाने पर वह देव शंकायुक्त तथा कालुष्य युक्त–हो गया, कुछ उत्तर नहीं दे सका । उसने कुंडकोलिक की नामांकित अंगूठी और दुपट्टा वापस पृथ्वीशिलापट्टक पर रख दिया तथा जिस दिशा से आया था, उसी दिशा की ओर लौट गया । उस काल और उस समय भगवान महावीर का काम्पिल्य-पुर में पदार्पण हुआ । श्रमणोपासक कुंडकोलिक ने जब यह सूना तो वह अत्यन्त प्रसन्न हुआ और भगवान के दर्शन के लिए कामदेव की तरह गया, भगवान की पर्युपासना की, धर्म-देशना सूनी ।

सूत्र - ३९

भगवान महावीर ने श्रमणोपासक कुंडकोलिक से कहा–कुंडकोलिक ! कल दोपहर के समय अशोक-वाटिका में एक देव तुम्हारे समक्ष प्रकट हुआ । वह तुम्हारी नामांकित अंगूठी और दुपट्टा लेकर आकाश में चला गया । यावत् हे कुंडकोलिक ! क्या यह ठीक है ? भगवन् ! ऐसा ही हुआ । तब भगवान ने जैसा कामदेव से कहा था, उसी प्रकार उससे कहा–कुंडकोलिक ! तुम धन्य हो । श्रमण भगवान महावीर ने उपस्थित श्रमणों और श्रमणियों को सम्बोधित कर कहा–आर्यो ! यदि घर में रहने वाले गृहस्थ भी अन्य मतानुयायियों को अर्थ, हेतु, प्रश्न,

युक्ति तथा उत्तर द्वारा निरुत्तर कर देते हैं तो आर्यो ! द्वादशांगरूप गणिपिटक का–अध्ययन करने वाले श्रमण निर्ग्रन्थ तो अन्य मतानुयायियों को अर्थ द्वारा निरुत्तर करने में समर्थ हैं ही । श्रमण भगवान महावीर का यह कथन उन साधु-साध्वीयों ने 'ऐसा ही है भगवन् !' यों कहकर स्वीकार किया । श्रमणोपासक कुंडकोलिक ने श्रमण भगवान महावीर को वंदन-नमस्कार किया, प्रश्न पूछे, समाधान प्राप्त किया तथा जिस दिशा से वह आया था, उसी दिशा की ओर लौट गया । भगवान महावीर अन्य जनपदों में विहार कर गए ।

सूत्र - ४०

तदनन्तर श्रमणोपासक कुंडकोलिक को व्रतों की उपासना द्वारा आत्म-भावित होते हुए चौदह वर्ष व्यतीत हो गए । जब पन्द्रहवा वर्ष आधा व्यतीत हो चूका था, एक दिन आधी रात के समय उसके मन में विचार आया, जैसा कामदेव के मन में आया था । उसी की तरह अपने बड़े पुत्र को अपने स्थान पर नियुक्त कर वह भगवान महावीर के पास अंगीकृत धर्म-प्रज्ञप्ति के अनुरूप पोषधशाला में उपासना-रत रहने लगा । उसने ग्यारह उपासक-प्रतिमाओं की आराधना की । अन्त में वह देह-त्याग कर वह अरुणध्वज विमान में देवरूप में उत्पन्न हुआ । यावत् सब दुःखों का अन्त करेगा ।

अध्ययन-६ का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

अध्ययन-७ – सद्दालपुत्र

सूत्र - ४१

पोलासपुर नामक नगर था । सहस्राम्रवन उद्यान था । जितशत्रु राजा था । पोलासपुर में सकडालपुत्र नामक कुम्हार रहता था, जो आजीविक-सिद्धान्त का अनुयायी था । वह लब्धार्थ-गृहीतार्थ-पुष्टार्थ-विनिश्चितार्थ-अभिगतार्थ हुए था । वह अस्थि और मज्जा पर्यन्त अपने धर्म के प्रति प्रेम व अनुराग से भरा था । उसका निश्चित विश्वास था की आजीविक मत ही अर्थ–यही परमार्थ है । इसके सिवाय अन्य अनर्थ–प्रयोजनभूत हैं । यों आजीविक मत के अनुसार वह आत्मा को भावित करता हुआ धर्मानुरत था । आजीविक मतानुयायी सकडालपुत्र की एक करोड़ स्वर्ण-मुद्राएं सुरक्षित धन के रूप में खजाने में रखी थी । एक करोड़ स्वर्ण-मुद्राएं व्यापार में थीं तथा एक करोड़ स्वर्ण-मुद्राएं–साधन-सामग्री में लगी थीं । उसके एक गोकुल था, जिसमें दस हजार गायें थीं । आजीवि-कोपासक सकडालपुत्र की पत्नी का नाम अग्निमित्रा था ।

पोलासपुर नगर के बाहर आजीविकोपासक सकडालपुत्र कुम्हारगिरी के पाँच सौ आपण–थीं । वहाँ भोजन तथा मजदूरी रूप वेतन पर काम करने वाले बहुत से पुरुष प्रतिदिन प्रभात होते ही, करवे, गडुए, परातें, घड़े, छोटे घड़े, कलसे, बड़े घड़े, मटके, सुराहियाँ, उष्ट्रिका–कूंपें बनाने में लग जाते थे । भोजन व मजदूरी पर काम करने वाले दूसरे बहुत से पुरुष सुबह होते ही बहुत से करवे तथा कूंपों के साथ सड़क पर अवस्थित हो, बिक्री में लग जाते थे ।

सूत्र - ४२

एक दिन आजीविकोपासक सकडालपुत्र दोपहर के समय अशोकवाटिका में गया, मंखलिपुत्र गोशालक के पास अंगीकृत धर्म-प्रज्ञप्ति–के अनुरूप वहाँ उपासना-रत हुआ । आजीविकोपासक सकडालपुत्र के समक्ष एक देव प्रकट हुआ । छोटी-छोटी घंटियों से युक्त उत्तम वस्त्र पहने हुए आकाश में अवस्थित उस देव ने आजीविको-पासक सकडालपुत्र से कहा–देवानुप्रिय ! कल प्रातःकाल यहाँ महामाहन–अप्रतिहत ज्ञान, दर्शन के धारक, अतीत, वर्तमान एवं भविष्य–के ज्ञाता, अर्हत्–जिन–सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, तीनों लोक जिनकी सेवा एवं उपासना की वांछा लिए रहते हैं, देव, मनुष्य तथा असुर सभी द्वारा अर्चनीय–वन्दनीय–नमस्करणीय, यावत् पर्युपासनीय–तथ्य कर्म-सम्पदा संप्रयुक्त–पधारेंगे । तुम उन्हें वन्दन करना, प्रातिहारिक–पीठ–फलक–शय्या–संस्तारक आदि हेतु उन्हें आमंत्रित करना । यों दूसरी बार व तीसरी बार कहकर जिस दिशा से प्रकट हुआ था, उसी दिशा की ओर लौट गया ।

उस देव द्वारा यों कहे जान पर आजीविकोपासक सकडालपुत्र के मन में ऐसा विचार आया मनोरथ, चिन्तन और संकल्प उठा–मेरे धर्माचार्य, धर्मोपदेशक, महामाहन, अप्रतिम ज्ञान-दर्शन के धारक, सत्कर्म-सम्पत्ति युक्त मंखलिपुत्र गोशालक कल यहाँ पधारेंगे । तब मैं उनकी वन्दना, यावत् पर्युपासना करूँगा तथा प्रातिहारिक हेतु आमंत्रित करूँगा ।

सूत्र - ४३

तत्पश्चात् अगले दिन प्रातः काल भगवान महावीर पधारे । परीषद् जुड़ी, भगवान की पर्युपासना की । आजीविकोपासक सकडालपुत्र ने यह सूना कि भगवान महावीर पोलासपुर नगर में पधारे हैं । उसने सोचा–मैं जाकर भगवान की वन्दना, यावत् पर्युपासना करूँ । यों सोचकर उसने स्नान किया, शुद्ध, सभायोग्य वस्त्र पहने । थोड़े से बहुमूल्य आभूषणों से देह को अलंकृत किया, अनेक लोगों को साथ लिए वह अपने घर से नीकला, पोलासपुर नगर से सहस्राम्रवन उद्यान में, जहाँ भगवान महावीर विराजित थे, आया । तीन बार आदक्षिण-प्रदक्षिणा की, वन्दन–नमस्कार किया यावत् पर्युपासना की । तब श्रमण भगवान महावीर ने आजीविकोपासक सकडालपुत्र को तथा विशाल परीषद् को धर्म-देशना दी ।

श्रमण भगवान महावीर ने आजीविकोपासक सकडालपुत्र से कहा–सकडालपुत्र ! कल दोपहर के समय तुम जब अशोकवाटिका में थे तब एक देव तुम्हारे समक्ष प्रकट हुआ, आकाशस्थित देव ने तुम्हें यों कहा–कल प्रातः

अर्हत्, केवली आएंगे । भगवान ने सकडालपुत्र को पर्युपासना तक सारा वृत्तान्त कहा । फिर पूछा–सकडालपुत्र ! क्या ऐसा हुआ ? सकडालपुत्र बोला–ऐसा ही हुआ । तब भगवान ने कहा–सकडालपुत्र ! उस देव ने मंखलिपुत्र गोशालक को लक्षित कर वैसा नहीं कहा था । श्रमण भगवान महावीर द्वारा यों कहे जाने पर आजीविकोपासक सकडालपुत्र के मन में ऐसा विचार आया–श्रमण भगवान महावीर ही महामाहन, उत्पन्न ज्ञान, दर्शन के धारक तथा सत्कर्म-सम्पत्ति-युक्त हैं । अतः मेरे लिए यह श्रेयस्कर है कि मैं श्रमण भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार कर प्रातिहारिक पीठ, फलक हेतु आमंत्रित करूँ । श्रमण भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार किया और बोला–भगवन् ! पोलासपुर नगर के बाहर मेरी पाँच-सौ कुम्हारगिरि की कर्मशालाएं हैं । आप वहाँ प्रातिहारिक पीठ, संस्तारक ग्रहण कर बिराजे । भगवान महावीर ने आजीविकोपासक सकडलापुत्र का यह निवेदन स्वीकार किया तथा उसकी पाँच सौ कुम्हारगिरि की कर्मशालाओं में प्रासुक, शुद्ध प्रातिहारिक पीठ, फलक, संस्तारक ग्रहण कर भगवान अवस्थित हुए ।

सूत्र - ४४

एक दिन आजीविकोपासक सकडालपुत्र हवा लगे हुए मिट्टी के बर्तन कर्मशाला के भीतर से बाहर लाया और उसने उन्हें धूप में रखा । भगवान महावीर ने आजीविकोपासक सकडलापुत्र से कहा–सकडालपुत्र ! ये मिट्टी के बर्तन कैसे बने ? आजीविकोपासक सकडालपुत्र बोला–भगवन् ! पहले मिट्टी की पानी के साथ गूंथा जाता है, फिर राख और गोबर के साथ उसे मिलाया जाता है, उसे चाक पर रखा जाता है, तब बहुत से करवे, यावत् कूंपे बनाए जाते हैं । तब श्रमण भगवान महावीर ने पूछा–सकडालपुत्र ! ये मिट्टी के बर्तन क्या प्रयत्न, पुरुषार्थ एवं उद्यम द्वारा बनते हैं, अथवा उसके बिना बनते हैं ? आजीविकोपासक सकडालपुत्र ने श्रमण भगवान महावीर से कहा–भगवन् प्रयत्न, पुरुषार्थ तथा उद्यम के बिना बनते हैं । प्रयत्न, पुरुषार्थ आदि का कोई स्थान नहीं है, सभी भाव–नियत हैं

तब श्रमण भगवान महावीर ने कहा–सकडालपुत्र ! यदि कोई पुरुष तुम्हारे धूप में सुखाए हुए मिट्टी के बर्तनों को चुरा ले या यावत् बहार डाल दे अथवा तुम्हारी पत्नी अग्निमित्रा के साथ विपुल भोग भोगे, तो उस पुरुष को तुम क्या दंड दोगे ? सकडालपुत्र बोला–भगवन् ! मैं उसे फटकारूँगा या पीटूँगा या यावत् असमय में ही उसके प्राण ले लूँगा । भगवान महावीर बोले–सकडालपुत्र ! यदि उद्यम यावत् पराक्रम नहीं है । सर्वभाव निश्चित है तो कोई पुरुष तुम्हारे धूप में सुखाए हुए मिट्टी के बर्तनों को नहीं चुराता है न उन्हें उठाकर बाहर डालता है और न तुम्हारी पत्नी अग्निमित्रा के साथ विपुल भोग ही भोगता है, न तुम उस पुरुष को फटकारते हो, न पीटते हो न असमय में ही उसके प्राण लेते हो ।

यदि तुम मानते हो कि वास्तव में कोई पुरुष तुम्हारे धूप में सुखाए मिट्टी के बर्तनों को यावत् उठाकर बाहर डाल देता है अथवा तुम्हारी पत्नी अग्निमित्रा के साथ विपुल भोग भोगता है, तुम उस पुरुष को फटकारते हो या यावत् असमय में ही उसके प्राण ले लेते हो, तब तुम प्रयत्न, पुरुषार्थ आदि के न होने की तथा होने वाले सब कार्यों के नियत होने की जो बात कहते हो, वह असत्य है । इससे आजीविकोपासक सकडालपुत्र को संबोध प्राप्त हुआ। सकडालपुत्र ने श्रमण भगवान महावीर को वन्दन–नमस्कार किया और उनसे कहा–भगवन् ! मैं आपसे धर्म सूनना चाहता हूँ । तब श्रमण भगवान महावीर ने आजीविकोपासक सकडालपुत्र को तथा उपस्थित परीषद् को धर्मोपदेश दिया ।

सूत्र - ४५

आजीविकोपासक सकडालपुत्र श्रमण भगवान महावीर से धर्म सूनकर अत्यन्त प्रसन्न एवं संतुष्ट हुआ और उसने आनन्द की तरह श्रावक-धर्म स्वीकार किया । विशेष यह कि सकडालपुत्र के परिग्रह के रूप में एक करोड़ स्वर्ण-मुद्राएं सुरक्षित धन के रूप में खजाने में रखी थी, एक करोड़ स्वर्ण-मुद्राएं व्यापार में लगी थीं तथा एक करोड़ स्वर्ण-मुद्राएं घर के साधन-सामग्री में लगी थीं । उसके एक गोकुल था, जिसमें दस हजार गायें थीं ।

सकडालपुत्र ने श्रमण भगवान महावीर को वंदन–नमस्कार किया । वहाँ से चला, पोलासपुर नगर के बीच से गुजरात हुआ, अपने घर अपनी पत्नी अग्निमित्रा के पास आया और बोला–देवानुप्रिये ! श्रमण भगवान महावीर पधारे हैं, तुम जाओ, उनकी वन्दना, पर्युपासना करो, उनसे पाँच अणुव्रत तथा सात शिक्षाव्रत रूप बारह प्रकार का श्रावक-धर्म स्वीकार करो । श्रमणोपासक सकडालपुत्र की पत्नी अग्निमित्रा ने 'आप ठीक कहते हैं' यों कहकर विनयपूर्वक अपने पति का कथन स्वीकार किया । तब श्रमणोपासक सकडालपुत्र ने अपने सेवकों को बुलाया और कहा–देवानुप्रियों ! तेज चलने वाले, एक जैसे खुर, पूँछ तथा अनेक रंगों से चित्रित सींग वाले, गले में सोने के गहने और जोत धारण किए, गले से लटकती चाँदी की घंटियों सहित नाक में उत्तम सोने के तारों से मिश्रित पतली सी सूत की नाथ से जुड़ी रास के सहारे वाहकों द्वारा सम्हाले हुए, नीले कमलों से बने आभरणयुक्त मस्तक वाले, दो युवा बैलों द्वारा खींचे जाते, अनेक प्रकार की मणियों और सोने की बहुत सी घंटियों से युक्त, बढ़िया लकड़ी के एकदम सीधे, उत्तम और सुन्दर बने हुए जुए सहित, श्रेष्ठ लक्षणों से युक्त धार्मिक–श्रेष्ठ रथ तैयार करो, तैयार कर शीघ्र मुझे सूचना दो ।

श्रमणोपासक सकडालपुत्र द्वारा यों कहे जाने पर सेवकों ने यावत् उत्तम यान को शीघ्र ही उपस्थित किया। तब सकडालपुत्र की पत्नी अग्निमित्रा ने स्नान किया, शुद्ध, सभायोग्य वस्त्र पहने, थोड़े से बहुमूल्य आभूषणों से देह को अलंकृत किया । दासियों के समूह से घिरी वह धार्मिक उत्तम रथ पर सवार हुई, सवार होकर पोलासपुर नगर के बीच से गुजरती, सहस्राम्रवन उद्यान में आई, धार्मिक उत्तम रथ से नीचे उतरी, दासियों के समूह से घिरी जहाँ भगवान महावीर विराजित थे, वहाँ गई, जाकर वन्दन-नमस्कार किया, भगवान के न अधिक निकट न अधिक दूर सम्मुख अवस्थित हो नमन करती हुई, सूनने की उत्कंठा लिए, विनयपूर्वक हाथ जोड़े पर्युपासना करने लगी । श्रमण भगवान महावीर ने अग्निमित्रा को तथा उपस्थित परीषद् को धर्मोपदेश दिया ।

सकडालपुत्र की पत्नी अग्निमित्रा श्रमण भगवान महावीर से धर्म का श्रवण कर हर्षित एवं परितुष्ट हुई । उसने भगवान को वंदन-नमस्कार किया । वह बोली–भगवन् ! मुझे निर्ग्रन्थ-प्रवचन में श्रद्धा है यावत् जैसा आपने प्रतिपादित किया, वैसा ही है । देवानुप्रिय ! जिस प्रकार आपके पास बहुत से उग्र-भोग यावत् प्रव्रजित हुए । मैं उस प्रकार मुण्डित होकर प्रव्रजित होने में असमर्थ हूँ । इसलिए आपके पास पांच अणुव्रत, सात शिक्षाव्रत रूप बारह प्रकार का श्रावक-धर्म ग्रहण करना चाहती हूँ । देवानुप्रिये ! जिससे तुमको सुख हो, वैसा करो, विलम्ब मत करो । तब अग्निमित्रा ने श्रमण भगवान महावीर के पास पाँच अणुव्रत, सात शिक्षाव्रत रूप बारह प्रकार का श्रावकधर्म स्वीकार किया, श्रमण भगवान महावीर को वंदन-नमस्कार किया । उसी उत्तम धार्मिक रथ पर सवार हुई तथा जिस दिशा से आई थी उसी की ओर लौट गई । तदनन्तर श्रमण भगवान महावीर पोलासपुर नगर से सहस्राम्रवन उद्यान से प्रस्थान कर एक दिन अन्य जनपदों में विहार कर गए ।

सूत्र - ४६

तत्पश्चात् सकडालपुत्र जीव-अजीव आदि तत्त्वों का ज्ञाता श्रमणोपासक हो गया । धार्मिक जीवन जीने लगा । कुछ समय बाद मंखलिपुत्र गोशालक ने यह सूना कि सकडालपुत्र आजीविक-सिद्धान्त को छोड़कर श्रमण-निर्ग्रन्थों की दृष्टि–स्वीकार कर चूका है, तब उसने विचार किया कि मैं सकडालपुत्र के पास जाऊं और श्रमण निर्ग्रन्थों की मान्यता छुड़ाकर उसे फिर आजीविक-सिद्धान्त ग्रहण करवाऊं । वह आजीविक संघ के साथ पोलास-पुर नगर में आया, आजीविक-सभा में पहुँचा, वहाँ अपने पात्र, उपकरण रखे तथा कतिपय आजीविकों के साथ जहाँ सकडालपुत्र था, वहाँ गया । श्रमणोपासक सकडालपुत्र ने मंखलिपुत्र गोशालक को आते हुए देखा । न उसे आदर दिया और न परिचित जैसा व्यवहार ही किया । आदर न करता हुआ, परिचित सा व्यवहार न करता हुआ, चूपचाप बैठा रहा ।

श्रमणोपासक सकडालपुत्र से आदर न प्राप्त कर, उसका उपेक्षा भाव देख, मंखलिपुत्र गोशालक पीठ, फलक, शय्या तथा संस्तारक आदि प्राप्त करने हेतु श्रमण भगवान महावीर का गुण-कीर्तन करता हुआ श्रमणो-

पासक सकडालपुत्र से बोला–देवानुप्रिय ! क्या यहाँ महामाहन आए थे ? श्रमणोपासक सकडालपुत्र ने मंखलिपुत्र गोशालक से कहा–देवानुप्रिय ! कौन महामाहन ? मंखलिपुत्र गोशालक ने कहा–श्रमण भगवान महावीर महामाहन हैं । देवानुप्रिय ! श्रमण भगवान महावीर को महामाहन किस अभिप्राय से कहते हो ? सकडालपुत्र ! श्रमण भगवान महावीर अप्रतिहत ज्ञान दर्शन के धारक हैं, तीनों लोकों द्वारा सेवित एवं पूजित हैं, सत्कर्मसम्पत्ति से युक्त हैं, इसलिए मैं उन्हें महामाहन कहता हूँ । क्या महागोप आए थे ? देवानुप्रिय ! कौन महागोप ? श्रमण भगवान महावीर महागोप हैं । देवानुप्रिय ! उन्हें आप किस अर्थ में महागोप कह रहे हैं ? हे सकडालपुत्र ! इस संसार रूपी भयानक वन में अनेक जीव नश्यमान हैं–विनश्यमान हैं–छिद्यमान हैं–भिद्यमान हैं–लुप्यमान हैं–विलुप्यमान हैं–उनका धर्म रूपी दंड से रक्षण करते हुए, संगोपन करते हुए–उन्हें मोक्ष रूपी विशाल बाड़े में सहारा देकर पहुँचाते हैं । सकडालपुत्र ! इसलिए श्रमण भगवान महावीर को मैं महागोप कहता हूँ । हे सकडालपुत्र ! महासार्थवाह आए थे ? महासार्थवाह आप किसे कहते हैं ? सकडालपुत्र ! श्रमण भगवान महावीर महासार्थवाह हैं । किस प्रकार ! हे सकडालपुत्र ! इस संसार रूपी भयानक वन में बहुत से जीव नश्यमान, विनश्यमान एवं विलुप्यमान हैं, धर्ममय मार्ग द्वारा उनकी सुरक्षा करते हुए–सहारा देकर मोक्ष रूपी महानगर में पहुँचाते हैं । सकडालपुत्र ! इस अभिप्राय से मैं उन्हें महासार्थवाह कहता हूँ ।

गोशालक–देवानुप्रिय ! क्या महाधर्मकथी आए थे ? देवानुप्रिय ! कौन महाधर्मकथी ? श्रमण भगवान महावीर महाधर्मकथी हैं । श्रमण भगवान महावीर महाधर्मकथी किस अर्थ में हैं ? हे सकडालपुत्र ! इस अत्यन्त विशाल संसार में बहुत से प्राणी नश्यमान, विनश्यमान, खाद्यमान, छिद्यमान, भिद्यमान, लुप्यमान हैं, विलुप्यमान हैं, उन्मार्गगामी हैं, सत्पथ से भ्रष्ट हैं, मिथ्यात्व से ग्रस्त हैं, आठ प्रकार के कर्म रूपी अन्धकार-पटल के पर्दे से ढके हुए हैं, उनको अनेक प्रकार से सत् तत्त्व समझाकर विश्लेषण कर, चार–गतिमय संसार रूपी भयावह वन से सहारा देकर नीकालते हैं, इसलिए देवानुप्रिय ! मैं उन्हें महाधर्मकथी कहता हूँ । गोशालक ने पुनः पूछा–क्या यहाँ महा-निर्यामक आए थे ? देवानुप्रिय ! कौन महानिर्यामक ? श्रमण भगवान महावीर महानिर्यामक हैं ? सकडालपुत्र–किस प्रकार ? देवानुप्रिय ! संसार रूपी महासमुद्र में बहुत से जीव नश्यमान, विनश्यमान एवं विलुप्यमान हैं, डूब रहे हैं, गोते खा रहे हैं, बहते जा रहे हैं, उनको सहारा देकर धर्ममयी नौका द्वारा मोक्ष रूपी किनारे पर ले जाते हैं । इसलिए मैं उनको महानिर्यामक-कर्णधार या महान् खेवैया कहता हूँ । तत्पश्चात् श्रमणोपासक सकडालपुत्र ने मंखलिपुत्र गोशालक से कहा–देवानुप्रिय ! आप इतने छेक वचक्षण निपुण–नयवादी, उपदेशलब्ध–बहुश्रुत, विज्ञान-प्राप्त हैं, क्या आप मेरे धर्माचार्य, धर्मोपदेशक भगवान महावीर के साथ तत्त्वचर्चा करने में समर्थ हैं ? गोशालक–नहीं, ऐसा संभव नहीं है ।

सकडालपुत्र–देवानुप्रिय ! कैसे कह रहे हैं कि आप मेरे धर्माचार्य महावीर के साथ तत्त्वचर्चा करने में समर्थ नहीं हैं ? सकडालपुत्र ! जैसे कोई बलवान, नीरोग, उत्तम लेखक की तरह अंगुलियों की स्थिर पकड़वाला, प्रतिपूर्ण परिपुष्ट हाथ-पैर वाला, पीठ, पार्श्व, जंघा आदि सुगठित अंगयुक्त–अत्यन्त सघन, गोलाकार तथा तालाब की पाल जैसे कन्धों वाला, लंघन, प्लावन–वेगपूर्वक जाने वाले, व्यायामों में सक्षम, मौष्टिक–यों व्यायाम द्वारा जिसकी देह सुदृढ तथा सामर्थ्यवाली है, आन्तरिक उत्साह व शक्तियुक्त, ताड़ के दो वृक्षों की तरह सुदृढ एवं दीर्घ भुजाओं वाला, सुयोग्य, दक्ष–प्राप्तार्थ–निपुणशिल्पोपगत–कोई युवा पुरुष एक बड़े बकरे, मेढ़े, सूअर मूर्गे, तीतर, बटेर, लवा, कबूतर, पपीहे, कौए या बाज के पंजे, पैर, खुर, पूँछ, पंख, सींग, रोम जहाँ से भी पकड़ लेता है, उसे वहीं निश्चल तथा निष्पन्द–कर देता है, इसी प्रकार श्रमण भगवान महावीर मुझे अनेक प्रकार के तात्त्विक अर्थों, हेतुओं तथा विश्लेषणों द्वारा जहाँ-जहाँ पकड़ लेंगे, वहीं वहीं मुझे निरुत्तर कर देंगे । सकडालपुत्र ! इसीलिए कहता हूँ कि भगवान महावीर के साथ मैं तत्त्वचर्चा करने में समर्थ नहीं हूँ ।

तब श्रमणोपासक सकडालपुत्र ने गोशालक मंखलिपुत्र से कहा–देवानुप्रिय ! आप मेरे धर्माचार्य महावीर का सत्य, यथार्थ, तथ्य तथा सद्भूत भावों से गुणकीर्तन कर रहे हैं, इसलिए मैं आपको प्रातिहारिक पीठ तथा

संस्तारक हेतु आमंत्रित करता हूँ, धर्म या तप मानकर नहीं । आप मेरे कुंभकारापण–में प्रातिहारिक पीठ, फलक ग्रहण कर निवास करें । मंखलिपुत्र गोशालक ने श्रमणोपासक सकडालपुत्र का यह कथन स्वीकार किया और वह उसकी कर्म-शालाओं में प्रातिहारिक पीठ ग्रहण कर रह गया । मंखलिपुत्र गोशालक आख्यापना–प्रज्ञापना–संज्ञापना–विज्ञापना–करके भी जब श्रमणोपासक सकडालपुत्र को निर्ग्रन्थ–प्रवचन से विचलित, क्षुभित तथा विपरिणामित–नहीं कर सका–तो वह श्रान्त, क्लान्त और खिन्न होकर पोलासपुर नगर से प्रस्थान कर अन्य जनपदों में विहार कर गया ।

सूत्र - ४७

तदनन्तर श्रमणोपासक सकडालपुत्र को व्रतों की उपासना द्वारा आत्म-भावित होते हुए चौदह वर्ष व्यतीत हो गए । जब पन्द्रहवा वर्ष चल रहा था, तब एक बार आधी रात के समय वह श्रमण भगवान महावीर के पास अंगीकृत धर्मप्रज्ञप्ति के अनुरूप पोषधशाला में उपासनारत था । अर्ध-रात्रि में श्रमणोपासक सकडालपुत्र समक्ष एक देव प्रकट हुआ । उस देव ने एक बड़ी, नीली तलवार नीकालकर श्रमणोपासक सकडालपुत्र से उसी प्रकार कहा, वैसे ही उपसर्ग किया, जैसा चुलनीपिता के साथ देव ने किया था । केवल यही अन्तर था कि यहाँ देव ने एक के नौ नौ मांस-खंड किए । ऐसा होने पर भी श्रमणोपासक सकडालपुत्र निर्भीकतापूर्वक धर्म-ध्यान में लगा रहा । उस देव ने जब श्रमणोपासक सकडालपुत्र को निर्भीक देखा, तो चौथी बार उसको कहा–मौत को चाहने वाले श्रमणोपासक सकडालपुत्र ! यदि तुम अपना व्रत नहीं तोड़ते हो तो तुम्हारी धर्म-सहायिका–धर्मवैद्या अथवा धर्मद्वीतिया, धर्मानुरागरक्ता, समसुखदुःख-सहायिका–पत्नी अग्निमित्रा को घर से ले आऊंगा, तुम्हारे आगे उसकी हत्या करूँगा, नौ मांस-खंड करूँगा, उबलते पानी से भरी कढ़ाही में खौलाऊंगा, उसके मांस और रक्त से तुम्हारे शरीर को सींचूंगा, जिससे तुम आर्त्तध्यान और विकट दुःख से पीड़ित होकर प्राणों से हाथ धो बैठोगे । देव द्वारा यों कहे जाने पर भी सकडालपुत्र निर्भीकतापूर्वक धर्म-ध्यान में लगा रहा । तब उस देव ने श्रमणोपासक सकडालपुत्र को पुनः दूसरी बार, तीसरी बार वैसा ही कहा । उस देव द्वारा पुनः दूसरी बार, तीसरी बार वैसा कहे जान पर श्रमणोपासक सकडालपुत्र के मन में चुलनीपिता की तरह विचार उत्पन्न हुआ । वह सोचने लगा–जिसने मेरे बड़े पुत्र को, मंझले पुत्र को तथा छोटे पुत्र को मारा, उनका मांस और रक्त मेरे शरीर पर छिड़का, अब मेरी सुख दुःख में सहयोगिनी पत्नी अग्निमित्रा को घर से ले आकर मेरे आगे मार देना चाहता है, अतः मेरे लिए यही श्रेयस्कर है कि मैं इस पुरुष को पकड़ लूँ । यों विचार कर वह दौड़ा । सकडालपुत्र की पत्नी अग्निमित्रा ने कोलाहल सूना । शेष चुलनीपिता की तरह है । केवल इतना भेद है, सकडालपुत्र अरुणभूत विमान में उत्पन्न हुआ । महाविदेह क्षेत्र में वह सिद्ध-मुक्त होगा ।

अध्ययन-७ का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

अध्ययन-८ – महाशतक

सूत्र - ४८

आर्य सुधर्मा ने कहा–जम्बू ! उस काल–उस समय–राजगृह नगर था । गुणशील चैत्य था । श्रेणिक राजा था । राजगृह नगर में महाशतक गाथापति था । वह समृद्धिशाली था, वैभव आदि में आनन्द की तरह था । केवल इतना अन्तर था, उसकी आठ करोड़ कांस्य-परिमित स्वर्ण-मुद्राएं सुरक्षित धन के रूप में खजाने में रखी थी, आठ करोड़ कांस्य-परिमित स्वर्ण-मुद्राएं व्यापार में लगी थी, आठ करोड़ कांस्य-परिमित स्वर्ण-मुद्राएं घर के वैभव में लगी थीं । उसके आठ व्रज–गोकुल थे । प्रत्येक गोकुल में दस-दस हजार गायें थीं । महाशतक के रेवती आदि तेरह रूपवती पत्नीयाँ थीं । अहीनप्रतिपूर्ण यावत् सुन्दर थी । महाशतक की पत्नी रेवती के पास अपने पीहर से प्राप्त आठ करोड़ स्वर्ण-मुद्राएं तथा दस-दस हजार गायों के आठ गोकुल व्यक्तिगत सम्पत्ति के रूप में थे । बाकी बारह पत्नों के पास उनके पीहर से प्राप्त एक-एक करोड़ स्वर्ण-मुद्राएं तथा दस-दस हजार गायों का एक-एक गोकुल व्यक्तिगत सम्पत्ति के रूप में था ।

सूत्र - ४९

उस समय भगवान महावीर का राजगृह में पदार्पण हुआ । परीषद् जुड़ी । महाशतक आनन्द की तरह भगवान की सेवा में गया । उसने श्रावक-धर्म स्वीकार किया । केवल इतना अन्तर था, महाशतक ने परिग्रह के रूप में आठ-आठ करोड़ कांस्य-परिमित स्वर्ण-मुद्राएं निधान आदि में रखने की तथा गोकुल रखने की मर्यादा की। रेवती आदि तेरह पत्नीयों के सिवाय अवशेष मैथुन-सेवन का परित्याग किया । एक विशेष अभिग्रह लिया–मैं प्रतिदिन लेन-देन में दो द्रोण-परिमाण कांस्य-परिमित स्वर्ण-मुद्राओं की सीमा रखूँगा । तब महाशतक, जो जीव, अजीव आदि तत्त्वों का ज्ञान प्राप्त कर चूका था, श्रमणोपासक हो गया । धार्मिक जीवन जीने लगा । श्रमण भगवान महावीर अन्य जनपदों में विहार कर गए ।

सूत्र - ५०

एक दिन आधी रात के समय गाथापति महाशतक की पत्नी रेवती के मन में, जब वह अपने पारिवारिक विषयों की चिन्ता में जग रही थी, यों विचार उठा–मैं इन अपनी बारह, सौतों के विघ्न के कारण अपने पति श्रमणो-पासक महाशतक के साथ मनुष्य-जीवन के विपुल विषय-सुख भोग नहीं पा रही हूँ । अतः मेरे लिए यही अच्छा है कि मैं इन बारह सौतों की अग्नि-प्रयोग, शस्त्र-प्रयोग या विष-प्रयोग द्वारा जान ले लूँ । इससे इनकी एक-एक करोड़ स्वर्ण-मुद्राएं और एक-एक गोकुल मुझे सहज ही प्राप्त हो जाएगा । मैं महाशतक के साथ मनुष्य-जीवन के विपुल विषय-सुख भोगती रहूँगी । यों विचार कर वह अपनी बारह सौतों को मारने के लिए अनुकूल अवसर, सूनापन एवं एकान्त की शोध में रहने लगी ।

एक दिन गाथापति की पत्नी रेवती ने अनुकूल पाकर अपनी बारह सौतों में से छह को शस्त्र-प्रयोग द्वारा और छह को विष-प्रयोग द्वारा मार डाला । यों अपनी बारह सौतों को मार कर उनकी पीहर से प्राप्त एक-एक करोड़ स्वर्ण-मुद्राएं तथा एक-एक गोकुल स्वयं प्राप्त कर लिया और वह श्रमणोपासक महाशतक के साथ विपुल भोग भोगती हुई रहने लगी । गाथापति की पत्नी रेवती मांस-भक्षण में लोलुप, आसक्त, लुब्ध तथा तत्पर रहती । वह लोहे की सलाख पर सेके हुए, घी आदि में तले हुए तथा आग पर भूने हुए बहुत प्रकार के मांस एवं सुरा, मधु, मेरक, मद्य, सीधु व प्रसन्न नामक मदिराओं का आस्वादन करती, मजा लेती, छक कर सेवन करती ।

सूत्र - ५१

एक बार राजगृह नगर में अमारि–की घोषणा हुई । गाथापति की पत्नी रेवती ने, जो मांस में लोलुप एवं आसक्त थी, अपने पीहर के नौकरों को बुलाया और उनसे कहा–तुम मेरे पीहर के गोकुलों में से प्रतिदिन दो-दो बछड़े मारकर मुझे ला दिया करो । पीहर के नौकरों ने गाथापति की पत्नी रेवती के कथन को 'जैसी आज्ञा' कहकर विनयपूर्वक स्वीकार किया तथा वे उसके पीहर के गोकुलों में से हर रोज सवेरे दो बछड़े लाने लगी ।

गाथापति की पत्नी रेवती बछड़ों के मांस के शूलक–सलाखों पर सेके हुए टुकड़ों आदि का तथा मदिरा का लोलुप भाव से सेवन करती हुई रहने लगी ।

सूत्र - ५२

श्रमणोपासक महाशतक को विविध प्रकार के व्रतों, नियमों द्वारा आत्मभावित होते हुए चौदह वर्ष व्यतीत हो गए । आनन्द आदि की तरह उसने भी ज्येष्ठ पुत्र को अपनी जगह स्थापित किया–पारिवारिक एवं सामाजिक उत्तरदायित्व बड़े पुत्र को सौंपा तथा स्वयं पोषधशाला में धर्माराधना में निरत रहने लगा । एक दिन गाथापति की पत्नी रेवती शराब के नशे में उन्मत्त, लड़खड़ाती हुई, बाल बिखेरे, बार-बार अपना उत्तरीय–फेंकती हुई, पोषध-शाला में जहाँ श्रमणोपासक महाशतक था, आई । बार-बार मोह तथा उन्माद जनक, कामोद्दीपक कटाक्ष आदि हाव भाव प्रदर्शित करती हुई श्रमणोपासक महाशतक से बोली–धर्म, पुण्य, स्वर्ग तथा मोक्ष की कामना, ईच्छा एवं उत्कंठा रखने वाले श्रमणोपासक महाशतक ! तुम मेरे साथ मनुष्य-जीवन के विपुल विषय-सुख नहीं भोगते, देवानुप्रिय ! तुम धर्म, पुण्य, स्वर्ग तथा मोक्ष से क्या पाओगे–

श्रमणोपासक महाशतक ने अपनी पत्नी रेवती की इस बात को कोई आदर नहीं दिया और न उस पर ध्यान ही दिया । वह मौन भाव से धर्माराधना में लगा रहा । उसकी पत्नी रेवती ने दूसरी बार, तीसरी बार फिर वैसा कहा । पर वह उसी प्रकार अपनी पत्नी रेवती के कथन को आदर न देता हुआ, उस पर ध्यान न देता हुआ धर्म-ध्यान में निरत रहा । यों श्रमणोपासक महाशतक द्वारा आदर न दिए जाने पर, ध्यान न दिए जाने पर उसकी पत्नी रेवती, जिस दिशा से आई थी उसी दिशा की ओर लौट गई ।

सूत्र - ५३

श्रमणोपासक महाशतक ने पहली उपासकप्रतिमा स्वीकार की । यों पहली से लेकर क्रमशः ग्यारहवीं तक सभी प्रतिमाओं की शास्त्रोक्त विधि से आराधना की । उग्र तपश्चरण से श्रमणोपासक के शरीर में इतनी कृशता–आ गई की नाडियाँ दीखने लगीं । एक दिन अर्द्ध रात्रि के समय धर्म-जागरण–करते हुए आनन्द की तरह श्रमणोपासक महाशतक के मन में विचार उत्पन्न हुआ–उग्र तपश्चरण द्वारा मेरा शरीर अत्यन्त कृश हो गया है, आदि । उसने अन्तिम मारणान्तिक संलेखना स्वीकार की, खान-पान का परित्याग किया–अनशन स्वीकार किया, मृत्यु की कामना न करता हुआ, वह आराधना में लीन हो गया ।

तत्पश्चात् श्रमणोपासक महाशतक को शुभ अध्यवसाय के कारण अवधिज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम से अवधिज्ञान उत्पन्न हो गया । फलतः वह पूर्व, पश्चिम तथा दक्षिण दिशा में एक-एक हजार योजन तक का लवण समुद्र का क्षेत्र, उत्तर दिशा में हिमवान् वर्षधर पर्वत तक क्षेत्र तथा अधोलोक में प्रथम नारकभूमि रत्नप्रभा में चौरासी हजार वर्ष की स्थिति वाले लोलुपाच्युत नामक नरक तक जानने-देखने लगा ।

सूत्र - ५४

तत्पश्चात् एक दिन महाशतक गाथापति की पत्नी रेवती शराब के नशे में उन्मत्त बार-बार अपना उत्तरीय फेंकती हुई पोषधशालामें जहाँ श्रमणोपासक महाशतक था, आई । महाशतक से पहले की तरह बोली । दूसरी बार, तीसरी बार, फिर वैसा ही कहा। अपनी पत्नी रेवती द्वारा दूसरी बार, तीसरी बार कहने पर श्रमणोपासक महाशतक को क्रोध आ गया । उसने अवधिज्ञान का उपयोग लगाया । अवधिज्ञान द्वारा जानकर उसने अपनी पत्नी रेवती से कहा–मौत को चाहने वाली रेवती ! तू सात रात के अन्दर अलसक नामक रोग से पीड़ित होकर आर्त्त-व्यथित, दुःखित तथा विवश होती हुई आयु-काल पूरा होने पर अशान्तिपूर्वक मरकर अधोलोक में प्रथम नारक भूमि रत्नप्रभा में लोलुपाच्युत नामक नरक में चौरासी हजार वर्ष के आयुष्य वाले नैरयिकों में उत्पन्न होगी । श्रमणोपासक महाशतक के यों कहने पर रेवती अपने आप से कहने लगी–श्रमणोपासक महाशतक मुझ पर रुष्ट हो गया है, मेरे प्रति उसमें दुर्भावना उत्पन्न हो गई है, वह मेरा बूरा चाहता है, न मालूम मैं किस बूरी मौत से मार डाली जाऊं । यों सोचकर वह भयभीत, त्रस्त, व्यथित, उद्विग्न होकर, डरती-डरती धीरे-धीरे वहाँ से नीकली, घर

आई । उसके मन में उदासी छा गई, यावत् व्याकुल होकर सोच में पड़ गई । तत्पश्चात् रेवती सात रात के भीतर अलसक रोग से पीड़ित हो गई । व्यथित, दुःखित तथा विवश होती हुई वह अपना आयुष्य पूरा कर प्रथम नारक भूमि रत्नप्रभा में लोलुपाच्युत नामक नरकमें ८४०००वर्ष के आयुष्य वाले नैरयिकों में नारक रूप में उत्पन्न हुई ।

सूत्र - ५५

उस समय श्रमण भगवान महावीर राजगृह में पधारे । समवसरण हुआ । परीषद् जुड़ी, धर्म-देशना सूनकर लौट गई । श्रमण भगवान महावीर ने गौतम को सम्बोधित कर कहा–गौतम ! यही राजगृह नगर में मेरा अन्तेवासी–महाशतक नामक श्रमणोपासक पोषधशाला में अन्तिम मारणान्तिक संलेखना की आराधना में लगा हुआ, आहार-पानी का परित्याग किए हुए मृत्यु की कामना न करता हुआ, धर्माराधना में निरत है । महाशतक की पत्नी रेवती शराब के नशे में उन्मत्त, यावत् पोषधशाला में महाशतक के पास आई । श्रमणोपासक महाशतक से विषय-सुख सम्बन्धी वचन बोली । उसने दूसरी बार, तीसरी बार फिर वैसा ही कहा । अपनी पत्नी रेवती द्वारा दूसरी बार, तीसरी बार यों कहे जाने पर श्रमणोपासक महाशतक को क्रोध आ गया । उसने अवधिज्ञान का प्रयोग किया, प्रयोग कर उपयोग लगाया । अवधिज्ञान से जान कर रेवती से कहा यावत् नैरयिकों में उत्पन्न होओगी ।

गौतम ! सत्य, तत्त्वरूप, तथ्य, सद्भूत, ऐसे वचन भी यदि अनिष्ट–अकान्त, अप्रिय, अमनोज्ञ, अमनाम–ऐसे हों तो अन्तिम मारणान्तिक संलेखना की आराधना में लगे हुए, अनशन स्वीकार किए हुए श्रमणोपासक के लिए उन्हें बोलना कल्पनीय–नहीं है । इसलिए देवानुप्रिय ! तुम श्रमणोपासक महाशतक के पास जाओ और उसे कहो कि अन्तिम मारणान्तिक संलेखना की आराधना में लगे हुए, अनशन स्वीकार किए हुए श्रमणोपासक के लिए सत्य, वचन भी यदि अनिष्ट, अकान्त, अप्रिय, अमनोज्ञ, मन प्रतिकूल हो तो बोलना कल्पनीय नहीं है । देवानुप्रिय! तुमने रेवती को सत्य किन्तु अनिष्ट वचन कहे । इसलिए तुम इस स्थान की–आलोचना करो, यथोचित प्रायश्चित्त स्वीकार करो । भगवान गौतम ने श्रमण भगवान महावीर का यह कथन 'आप ठीक फरमाते हैं' यों कहकर विनय-पूर्वक सूना । वे वहाँ से चले । राजगृह नगर के बीच से गुझरे, श्रमणोपासक महाशतक के घर पहुँचे । श्रमणोपासक महाशतकने जब भगवान गौतम को आते देखा तो वह हर्षित एवं प्रसन्न हुआ । उन्हें वन्दन–नमस्कार किया । भगवान गौतम ने श्रमणोपासक महाशतक से कहा–देवानुप्रिय ! श्रमण भगवान महावीर ने ऐसा आख्यात, भाषित, प्रज्ञप्त एवं प्ररूपित किया है–कहा है–यावत् प्रतिकूल हों तो उन्हें बोलना कल्पनीय नहीं है । देवानुप्रिय ! तुम अपनी पत्नी रेवती के प्रति ऐसे वचन बोले, इसलिए तुम इस स्थान की–आलोचना करो, प्रायश्चित्त करो ।

सूत्र - ५६

तब श्रमणोपासक महाशतक ने भगवान गौतम का कथन 'आप ठीक फरमाते हैं' कहकर विनयपूर्वक स्वीकार किया, अपनी भूल की आलोचना की, यथोचित प्रायश्चित्त किया । तत्पश्चात् भगवान गौतम श्रमणोपासक महाशतक के पास से रवाना हुए, राजगृह नगर के बीच से गुजरे, जहाँ श्रमण भगवान महावीर थे, वहाँ आए । भगवान को वंदन–नमस्कार किया । वंदन–नमस्कार कर संयम एवं तप से आत्मा को भावित करते हुए धर्माराधना में लग गए । तदनन्तर श्रमण भगवान महावीर, किसी समय राजगृहसे प्रस्थान कर अन्य जनपदों में विहार कर गए यों श्रमणोपासक महाशतक ने अनेकविध व्रत, नियम आदि द्वारा आत्मा को भावित किया– । बीस वर्ष तक श्रमणोपासक–का पालन किया । ग्यारह उपासक-प्रतिमाओं की भली-भाँति आराधना की । एक मास की संलेखना और एक मास का अनशन सम्पन्न कर आलोचना, प्रतिक्रमण कर, मरणकाल आने पर समाधिपूर्वक देह-त्याग किया । वह सौधर्म देवलोक में अरुणावतंसक विमान में देव रूप में उत्पन्न हुआ । वहाँ आयु चार पल्योपम की है । महाविदेह क्षेत्र में वह सिद्ध–मुक्त होगा ।

अध्ययन-८ का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

अध्ययन-९ – नंदिनीपिता

सूत्र - ५७

जम्बू ! उस काल–उस समय–श्रावस्ती नगरी थी, कोष्ठक चैत्य था । जितशत्रु राजा था । श्रावस्ती नगरी में नन्दिनीपिता नामक समृद्धिशाली गाथापति निवास करता था । उसकी चार करोड़ स्वर्ण-मुद्राएं सुरक्षित धन के रूप में खजाने में रखी थीं, चार करोड़ स्वर्ण-मुद्राएं व्यापार में लगी थीं तथा चार करोड़ स्वर्ण-मुद्राएं घर की साधन-सामग्री में लगी थीं । उसके चार गोकुल थे । प्रत्येक गोकुल में दस-दस हजार गायें थीं । उसकी पत्नी का नाम अश्विनी था । भगवान महावीर श्रावस्ती में पधारे । समवसरण हुआ । आनन्द की तरह नन्दिनीपिता ने श्रावक-धर्म स्वीकार किया । भगवान अन्य जनपदों में विहार कर गए ।

नन्दिनीपिता श्रावक-धर्म स्वीकार कर श्रमणोपासक हो गया, धर्माराधनापूर्वक जीवन बिताने लगा । तदनन्तर श्रमणोपासक नन्दिनीपिता को अनेक प्रकार से अणुव्रत, गुणव्रत आदि की आराधना द्वारा आत्मभावित होते हुए चौदह वर्ष व्यतीत हो गए । उसने आनन्द आदि की तरह अपने ज्येष्ठ पुत्र को पारिवारिक एवं सामाजिक उत्तरदायित्व सौंपा । स्वयं धर्मोपासना में निरत रहने लगा । नन्दिनीपिता ने बीस वर्ष तक श्रावक-धर्म का पालन किया । आनन्द आदि से इतना अन्तर है–देह-त्याग कर वह अरूणग विमान में उत्पन्न हुआ । महाविदेह क्षेत्र में वह सिद्ध-मुक्त होगा ।

अध्ययन-९ का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

अध्ययन-१० – लेइयापिता

सूत्र - ५८

जम्बू ! उस काल–उस समय–श्रावस्ती नगरी थी, कोष्ठक चैत्य था । जितशत्रु राजा था । श्रावस्ती नगरी में लेइयापिता नामक धनाढ्य एवं दीप्त–गाथापति निवास करता था । उसकी चार करोड़ स्वर्ण-मुद्राएं सुरक्षित धन के रूप में खजाने में रखी थीं, चार करोड़ स्वर्ण-मुद्राएं व्यापार में लगी थीं तथा चार करोड़ स्वर्ण-मुद्राएं घर के वैभव–साधन-सामग्री में लगी थीं । उसके चार गोकुल थे । प्रत्येक गोकुल में दस-दस हजार गायें थीं । उसकी पत्नी का नाम फाल्गुनी था । भगवान महावीर श्रावस्ती में पधारे । समवसरण हुआ । आनन्द की तरह लेइयापिता ने श्रावक-धर्म स्वीकार किया । कामदेव की तरह उसने अपने ज्येष्ठ पुत्र को पारिवारिक एवं सामाजिक उत्तरदायित्व सौंपा । भगवान महावीर के पास अंगीकृत धर्मशिक्षा के अनुरूप स्वयं पोषधशाला में उपासना निरत रहने लगा । इतना ही अन्तर रहा–उसे उपासना में कोई उपसर्ग नहीं हुआ, पूर्वोक्त रूप में उसने ग्यारह श्रावक-प्रतिमाओं की निर्विघ्न आराधना की । उसका जीवन-क्रम कामदेव की तरह समझना चाहिए । देव-त्याग कर वह सौधर्म-देवलोक में अरुणकील विमान में देवरूप में उत्पन्न हुआ । उसकी आयुस्थिति चार पल्योपम की है । महाविदेह क्षेत्र में वह सिद्ध–मुक्त होगा ।

अध्ययन-१० का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

शेष कथन

सूत्र - ५९

दसों ही श्रमणोपासकों को पन्द्रहवे वर्ष में पारिवारिक, सामाजिक उत्तरदायित्व से मुक्त हो कर धर्म-साधना में निरत होने का विचार हुआ । दसों ही ने बीस वर्ष तक श्रावक-धर्म का पालन किया । जम्बू ! सिद्धिप्राप्त भगवान महावीर ने सातवे अंग उपासकदशा के दसवें अध्ययन का यह अर्थ–प्रतिपादित किया ।

सूत्र - ६०

सातवें अंग उपासकदशा में एक श्रुत-स्कन्ध है । दस अध्ययन हैं । उनमें एक सरीखा स्वर–है, इसका दस दिनों में उपदेश किया जाता है । दो दिनों में समुद्देश और अनुज्ञा दी जाती है । इसी प्रकार अंग का समुद्देश और अनुमति समझना चाहिए ।

सूत्र - ६१

प्रस्तुत सूत्र में वर्णित उपासक निम्नांकित नगरों में हुए–आनन्द वाणिज्यग्राम में, कामदेव चम्पा में, चुलनी-पिता वाराणसी में, सुरादेव वाराणसी में, चुल्लशतक आलभिका में, कुंडकौलिक काम्पिल्यपुर में जानना । तथा–

सूत्र - ६२

सकडालपुत्र पोलासपुर में, महाशतक राजगृह में, नन्दिनीपिता श्रावस्ती में, लेइयापिता श्रावस्ती में हुआ ।

सूत्र - ६३

श्रमणोपासकों की भार्याओं के नाम निम्नलिखित थे–आनन्द की शिवनन्दा, कामदेव की भद्रा, चुलनीपिता की श्यामा, सुरादेव की धन्या, चुल्लशतक की बहुला, कुंडकौलिक की पूषा, सकडालपुत्र की अग्निमित्रा, महाशतक की रेवती आदि तेरह नन्दीनिपिता की अश्विनी और लेइयापिता की फाल्गुनी ।

सूत्र - ६४

श्रमणोपासकों के जीवन की विशेष घटनाएं निम्नांकित थी–आनन्द को अवधिज्ञान विस्तार के सम्बन्ध में गौतम स्वामी का संशय, भगवान महावीर द्वारा समाधान । कामदेव को पिशाच आदि के रूप में देवोपसर्ग, श्रमणो-पासक की अन्त तक दृढता । चुलनीपिता को देव द्वारा मातृवध की धमकी से व्रत-भंग और प्रायश्चित्त । सुरादेव को देव द्वारा सोलह भयंकर रोग उत्पन्न करने की धमकी से व्रत-भंग और प्रायश्चित्त । चुल्लशतक को देव द्वारा स्वर्ण-मुद्राएं आदि सम्पत्ति बिखेर देने की धमकी से व्रत-भंग और प्रायश्चित्त । कुंडकौलिक को देव द्वारा उत्तरीय एवं अंगूठी उठाकर गोशालक मत की प्रशंसा, कुंडकौलिक की दृढता, नियतिवाद का खण्डन, देव का निरुत्तर होना । सकडालपुत्र को व्रतशील पत्नी अग्निमित्रा द्वारा भग्न-व्रत पति को पुनः धर्मस्थित करना । महाशतक को व्रत-हीन रेवती का उपसर्ग, कामोद्दीपक व्यवहार, महाशतक की अविचलता । नन्दिनीपिता को व्रताराधना में कोई उपसर्ग नहीं हुआ । और लेइयापिता को व्रताराधना में कोई उपसर्ग नहीं हुआ ।

सूत्र - ६५

श्रमणोपासक देह त्यागकर निम्नांकित विमानों में उत्पन्न हुए–आनन्द अरुण में, कामदेव अरुणाभ में, चुलनीपिता अरुणप्रभ में, सुरादेव अरुणकान्त में, चुल्लशतक अरुणश्रेष्ठ में, कुंडकौलिक अरुणध्वज में, सकडाल-पुत्र अरुणभूत में, महाशतक अरुणावतंस में, नन्दिनीपिता अरुणगव में और लेइयापिता अरुणकील में उत्पन्न हुए ।

सूत्र - ६६

श्रमणोपासकों के गोधन की संख्या निम्नांकित रूप में थीं–आनन्द की ४० हजार, कामदेव की ६० हजार, चुलनीपिता की ८०००० , सुरादेव की ६०००० , चुल्लशतक की ६० हजार, कुंडकौलिक की ६० हजार, सकडाल पुत्र की १० हजार, महाशतक की ८० हजार, नन्दीनिपिता की ४० हजार और लेइयापिता की ४० हजार थीं ।

सूत्र - ६७

श्रमणोपासकों की सम्पत्ति निम्नांकित स्वर्ण-मुद्राओं में थी–आनन्द की १२ करोड़, कामदेव की १८

करोड़, चुलनीपिता की २४ करोड़, सुरादेव की १८ करोड़, चुल्लशतक की १८ करोड़, कुंडकौलिक की १८ करोड़, सकडालपुत्र की ३ करोड़, महाशतक की कांस्य-परिमित २४ करोड़, नन्दिनीपिता की १२ करोड़ और लेइयापिता की १२ करोड़ थीं ।

सूत्र - ६८

आनन्द आदि श्रमणोपासकों ने निम्नांकित २१ बातों में मर्यादा की थीं–शरीर पोंछने का तोलिया, दतौन, केश एवं देह-शुद्धि के लिए फल-प्रयोग, मालिश के तैल, उबटन, स्नान के लिए पानी, पहनने के वस्त्र, विलेपन, पुष्प, आभूषण, धूप, पेय । तथा–

सूत्र - ६९

भक्ष्य–मिठाई, ओदन, सूप, घृत, शाक, व्यंजन, पीने का पानी, मुखवास ।

सूत्र - ७०

इन दस श्रमणोपासकों में आनन्द तथा महाशतक को अवधि-ज्ञान प्राप्त हुआ, आनंद का अवधिज्ञान इस प्रकार है–पूर्व, पश्चिम तथा दक्षिण दिशा में लवणसमुद्र में पाँच-पाँच सौ योजन तक, उत्तर दिशा में चुल्लहिमवान् वर्षधर पर्वत तक, ऊर्ध्व-दिशा में सौधर्म देवलोक तक, अधोदिशा में प्रथम नारक भूमि रत्नप्रभा में लोलुपाच्युत नामक स्थान तक ।

सूत्र - ७१

प्रत्येक श्रमणोपासक ने ११-११ प्रतिमाएं स्वीकार की थीं, जो निम्नांकित हैं–दर्शन-प्रतिमा, व्रत-प्रतिमा, सामायिक-प्रतिमा, पोषध-प्रतिमा, कायोत्सर्ग-प्रतिमा, ब्रह्मचर्य-प्रतिमा, सचित्ताहार-वर्जन-प्रतिमा, स्वयं आरम्भ-वर्जन-प्रतिमा, भृतक-प्रेष्यारम्भ-वर्जन-प्रतिमा, भृतक-प्रेष्यारम्भ-वर्जन-प्रतिमा, उद्दिष्ट-भक्त-वर्जन-प्रतिमा, श्रमण-भूत-प्रतिमा।

सूत्र - ७२

इन सभी श्रमणोपासकों ने २०-२० वर्ष तक श्रावक-धर्म का पालन किया, अन्त में एक महीने की संलेखना तथा अनशन द्वारा देह-त्याग किया, सौधर्म देवलोक में चार-चार पल्योपम आयु के देवों के रूप में उत्पन्न हुए । देवभव के अनन्तर सभी महाविदेह क्षेत्र में उत्पन्न होंगे, मोक्ष–लाभ करेंगे ।

७ – उपासकदशा-अंगसूत्र-७ का
मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

પૂજ્યપાદ્ શ્રી આનંદ–ક્ષમા–લલિત–સુશીલ–સુધર્મસાગર ગુરૂભ્યો નમ:

७

उपासकदशा

आगमसूत्र हिन्दी अनुवाद

[अनुवादक एवं संपादक]

आगम दीवाकर मुनि दीपरत्नसागरजी

[M.Com. M.Ed. Ph.D. श्रुत महर्षि]

વેબ સાઈટ:– (1) www.jainelibrary.org (2) deepratnasagar.in

ઈમેલ એડ્રેસ:- jainmunideepratnasagar@gmail.com મોબાઈલ 09825967397